चन्दामामा
सितम्बर १९७१
70P

लज़्ज़तदार
मज़ेदार
ठंडा मीठा
पारले
एक्स्ट्रा-स्ट्राँग
पिपरमिण्ट
एक पैकेट में ९ पिपरमिण्ट—
कितनी कम कीमत पर!
मज़ेदार तरोताज़ा—
तरोताज़ा मज़ेदार
Gold Star
पीपरमींट
Peppermint
Parle
PARLE
everest /981/PP hin

चन्दामामा

सितम्बर १९७१

संपादकीय	१
अमरवाणी	२
लालच का फल	३
साहसी राजकुमार	५
शिलारथ	९
क़ीमती इलाज	१७
पंचकल्याणी–४	२१
खुदा की मर्जी	२५
बड़ा कौन है?	२९
जादू की करामत	३०
लाजवाब	३५
असली और नकली	३६
सच्चा इन्साफ़	३९
राजधर्म	४३
अच्छा सबक़	४४
महाभारत–३०	४९
शिवपुराण–७	५७
संसार के आश्चर्य	६१
फोटो-परिचयोक्ति प्रतियोगिता	६४
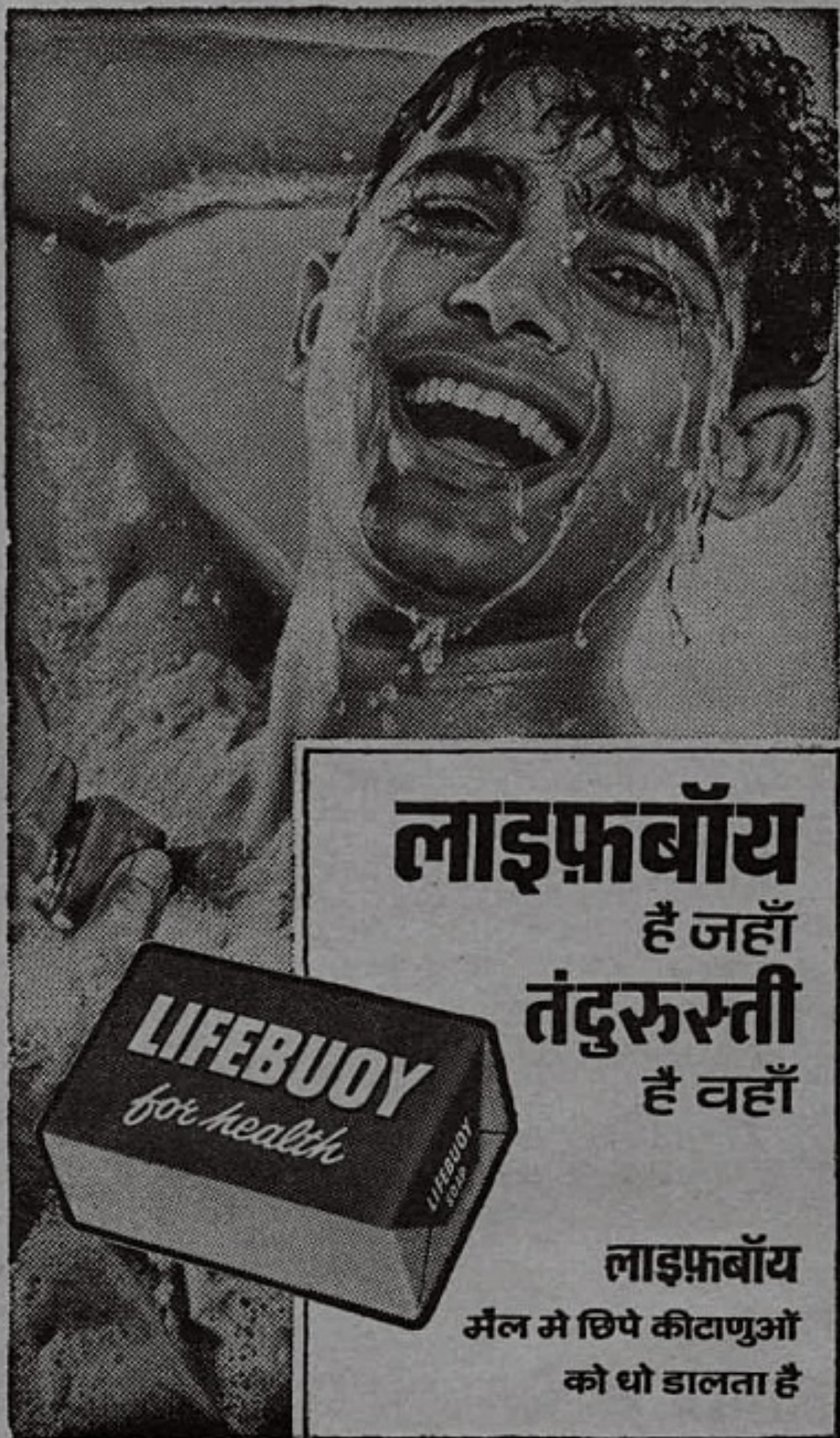
LIFEBUOY
for health
लाइफ़बॉय
है जहाँ
तंदुरुस्ती
है वहाँ
लाइफ़बॉय
मैल मे छिपे कीटाणुओं
को धो डालता है
हिन्दुस्तान लीवर का एक उत्कृष्ट उत्पादन

इस बेचारे दांत की हत्या कर दी गयी!

बड़ी ही बेरहमी से। तिलतिल जलाकर। और इस दर्दनाक सच्चाई का पर्दाफ़ाश तब हुआ जब दांत ही साफ़ हो चुका था। गुनाहगार कौन था? लापरवाही। जानते हुए भी ऐसे-वैसे टूथपेस्ट से ब्रश करने की लापरवाही।

काश! इस दांत के मालिक ने नियमित रूप से बिनाका फ़्लोराइड इस्तेमाल किया होता। तो आज यह दिन न देखना पड़ता। क्योंकि बिनाका फ़्लोराइड में एस एम एफ़ पी है, जो दांतों की तीन तरह से हिफ़ाज़त करता है:
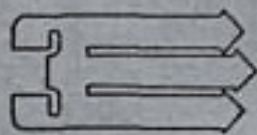
- इनेमल को मज़बूत बनाता है
- मुंह में एसिड नहीं बनने देता
- दंत-क्षय रोकता है

अपने दांतों की हत्या मत कीजिए!
दांतों की हिफ़ाज़त के लिए

बिनाका फ़्लोराइड

C I B A Cosmetics

ULKA-CF-30 HINDI

चन्दामामा

संचालक: चक्रपाणी

इस मास की बेताल कथा में एक अच्छी नसीहत है। जादूगर ए. सी. सरकार की कहानियाँ पाठकों में बहुत लोकप्रिय होती जा रही हैं। इस अंक में प्रकाशित उनकी कहानी में एक सुन्दर नीति है। अपने को कालीमाता का भक्त माननेवाला चोरों का सरदार एक साधारण जादू को न समझ पा सकने के कारण उसे ईश्वरीय शक्ति मानता है। अंधविश्वास का यह एक अच्छा उदाहरण है। इससे हम अपने विवेक को जगा सकते हैं।

वर्ष : २४ सितंबर १९७१ अंक : १

अमर वाणी

शास्त्रेषु निष्ठा, सहजश्च बोध :
प्रागल्भ्य मभस्तगुणा च वाणी,
कालानु रोध : प्रतिभानवत्व,
मेते गुणा : कामदुधा : क्रियासु ॥ १ ॥

[शास्त्रों के प्रति निष्ठा, सहज ज्ञान, साहस, वाक्चातुरी, समयानुकूल व्यवहार, प्रतिभा— ये सब कार्य-साधक के लिए कामधेनु जैसे गुण हैं ।]

त्रिविक्रमो भूदपि वामनो सौ,
स सूकरश्चेति स वै नृसिंह :
नीचै रनीचै रतिनीच नीचै,
सर्वे रुपायै : फलमेव साध्यम् ॥ २ ॥

[त्रिविक्रम भी वामन बना, वराह बना और नृसिंह भी बना, नीच हो या न हो, अति नीच ही क्यों न हो, किसी भी रूप में कार्य को साधना होगा ।]

कोति भार : समर्थानाम् ? किं दूरम् व्यवसायि नाम् ?
को विदेश : सविद्यानाम् ? क : पर : प्रियवादिनाम ? ॥ ३ ॥

[समर्थ व्यक्ति के लिए बोझ क्या चीज है ? कार्य-साधक के लिए दूर ही क्या है ? विद्वान के लिए विदेश से क्या मतलब है ? इसी तरह मीठी बात करने वाले का दुश्मन ही कौन होता है ?]

कार्य-साधन

लालच का फल

एक गाँव में अजय और विजय नामक दो भाई थे। कुछ समय बाद उनके माता-पिता मर गये। थोड़ी-बहुत जो ज़मीन थी, दोनों भाइयों ने आपस में बांट ली और खेतीबाड़ी करने लगे। अजय को खेतीबाड़ी करने में ही आराम मालूम होने लगा, मगर लालची विजय का दिल खेतीबाड़ी में न लगा। इसलिए उसने अपनी रही-सही ज़मीन बेच डाली और पड़ोसी गाँव में जाकर दूकान खोल दी।

शुरू शुरू में अजय ने ईमानदारी से व्यापार किया। धीरे-धीरे उसे मालूम हुआ कि ईमानदारी से व्यापार करने पर ज़्यादा नफ़ा नहीं होता है। इसलिए उसने धोखा-दगा करके खूब नफ़ा उठाया। चन्द ही दिनों में काफ़ी धन इकट्ठा किया।

उन्हीं दिनों लुटेरों के हमले आसपास के गाँवों में बराबर होने लगे। अजय को जब मालूम हुआ कि उसके गाँव पर भी लुटेरों का हमला होने जा रहा है, तब वह अपने रुपये-पैसे, चांदी-सोना एक पेटी में भर कर पिछवाड़े की राह से अपने भाई के गाँव की ओर चल पड़ा।

अजय जब गाँव के निकट पहुँचा, तब आधी रात बीत चुकी थी। उस समय पेटी को अपने भाई के घर ले जाना उसे अच्छा न लगा, क्योंकि उसके भाई को यह मालूम हो जाय कि उसके पास काफ़ी धन है तो विजय के मन में ईर्ष्या पैदा हो सकती है। या वह मदद भी माँग सकता है। यह भी हो सकता है कि विजय के गाँव पर भी लुटेरे हमला बोल सकते हैं। यह सब सोच-विचार करके अजय ने जल्दी-जल्दी एक खेत में अपनी पेटी गाड़ दी और बेफ़िक्र हो अपने गाँव लौट गया।

कुमारी बीना

अजय ने घर लौट कर देखा कि लुटेरे उसकी दूकान को लूट कर सारा माल उठा ले गये थे। गाँव वाले सब लुट कर रो रहे थे, अजय ने भी उनके सुर में अपना सुर मिलाया और अपने गहनों की पेटी लाने चल पड़ा। मगर बड़ी देर तक खोज-ढूंढ़ने पर भी उसे अपने गहनों की पेटी न मिली। उसे इस बात की सही याद भी न रही कि आधी रात के वक़्त उसने किस खेत में अपनी पेटी गाड़ रखी है।

गहनों की पेटी खोकर अजय को लाचार हो अपने भाई के आश्रय में जाना पड़ा। उसने अपने छोटे भाई विजय के घर जाकर गिड़गिड़ाया कि उसका सर्वस्व लुट चुका है। विजय को अपने बड़े भाई की हालत पर दया आयी और उसको अपने घर आश्रय दिया।

अजय जिस दिन विजय के घर आया, उसी दिन विजय के घर में बड़ी दावत दी गयी। उसके बाद भी विजय खान-पान, कपड़े-लत्ते और दान-धर्म के पीछे दिल खोल कर खर्च करने लगा। विजय का यह हाल देख अजय को बड़ा अचरज हुआ। उसने अपने भाई से पूछा—"विजय, तुम रुपये-पैसे पानी की तरह बहा देते हो, तुम्हें यह सारा धन कैसे मिला?"

"भैया, मुझे अपने खेत में गहनों की एक पेटी मिली। लो, यही वह पेटी है।" विजय ने पेटी दिखाई। वह पेटी अजय की ही थी। उसमें गहने और रुपये भरे थे। लेकिन अजय यह कैसे कह सकता था कि यह सारा धन उसी का है? क्योंकि उसने पहले ही विजय से कहा था कि उसकी सारी संपत्ति लुट गयी है। अगर वह सच्ची बात भी कह दे तो लोग यही कहेंगे कि धन के लोभ में पड़ कर यह अपने भाई पर चोरी का इलज़ाम लगा रहा है।

इसलिए अजय ने अपनी पेटी की बात नहीं उठायी। उसने अपने भाई से उधार लेकर जमीन खरीदी। खेती करते हुए जो आमदनी होती, उससे भाई का कर्ज़ चुकाते शेष दिन बिताने लगा।

साहसी राजकुमार

धौलपुर के राजा का जब अचानक देहांत हो गया, तब उसका पुत्र सूर्यसिंह बारह साल का था। इसलिए उसका चाचा वीरसिंह गद्दी पर बैठा। वीरसिंह के मन में यह विचार पैदा हुआ कि यदि सूर्यसिंह का वध कराया जाय तो वही हमेशा के लिए राजा बना रह सकता है!

मंत्री ने वीरसिंह के दिल की बात भांप ली। उसने राजकुमार की रक्षा करने का निश्चय किया। एक दिन गुप्त रूप से राजकुमार को साथ ले मंत्री कृष्णगढ़ के लिए चल पड़ा। कृष्णगढ़ की रानी सूर्यसिंह की चाची थी।

मंत्री का दल जब अंजनपुर नामक गांव पहुँचा, तब शाम हो चुकी थी। उस गांव के एक धनी किसान ने मंत्री के परिवार को ठहरने और उनके आतिथ्य का प्रबंध किया। राजकुमार को किसान के घरवालों ने बड़े ही अचरज के साथ देखा। मगर इसका कारण मंत्री की समझ में न आया। किसान का बेटा भी सोलह आने राजकुमार की रूप-रेखाएँ रखता था। उसका नाम बलराम था।

बलराम को देखते ही मंत्री के भी आश्चर्य की सीमा न रही। उसके चेहरे-मोहरे, आकृति, क़द और यहां तक कि उसकी चाल-ढाल में भी राजकुमार और बलराम में समानता थी। ऐसा लगता था, मानों वे दोनों जुड़वें बच्चे हों!

मंत्री को लगा कि बलराम को अपने साथ ले जाय तो काम बन सकता है! इस विचार के आते ही मंत्री ने किसान को अलग बुला ले जाकर समझाया—"देखो, तुम अपने बेटे को राजकुमार के साथ भेज दोगे तो भविष्य में तुम्हारा बड़ा उपकार हो सकता है। मैं तुम्हें मुंह मांगा इनाम

क्रांति त्रिवेदी

दूंगा। तुम अपने लड़के को मेरे साथ भेज दो!" किसान मना नहीं कर सका।

मंत्री राजकुमार के साथ बलराम को भी लेकर लगातार चार दिन की यात्रा करके कृष्णगढ़ जा पहुँचा। इस यात्रा के दौरान में राजकुमार और बलराम के बीच गहरी दोस्ती हो गयी। कृष्णगढ़ की रानी ने अतिथियों के ठहरने का अच्छा इंतज़ाम कराया। दिन बीतने के साथ राजकुमार और बलराम के बीच दोस्ती भी बढ़ती गयी।

उधर वीरसिंह को गुप्तचरों के ज़रिये मालूम हुआ कि राजकुमार सूर्यसिंह कृष्णगढ़ में पहुँच गया है। उसने बड़ी सेना के साथ कृष्णगढ़ पर हमला कर दिया।

राजकुमार को यह कतई पसंद न था कि उसके कारण उसकी चाची को ख़तरा मोल लेने की नौबत आये। उसने मंत्री से यह बात कह भी दी। मंत्री को भी यह सलाह अच्छी लगी। धौलपुर के मंत्री ने दुर्ग पर सफ़ेद झण्डा फहरा दिया और वीरसिंह के साथ संधि करने के लिए तैयार हो गया।

वीरसिंह ने अपने दूत के ज़रिये यह कहला भेजा कि उसे राजकुमार को सौंप दिया जाय तो वह बिना लड़ाई-झगड़े के वापस चला जायगा। मंत्री अब सोच में पड़ गया। उसने राजकुमार को बचाने का जो प्रयत्न किया, वह बेकार हो चला था।

मगर राजकुमार को बचाने के लिए एक उपाय बच रहा था। वह यह कि किसान के पुत्र बलराम को राजकुमार बता कर वीरसिंह के हाथ सौंपा जाय!

मंत्री ने बलराम को अलग ले जाकर समझाया—"बेटा, हमारा दुश्मन राजा वीरसिंह राजकुमार को सौंपने की मांग करता है। हो सकता है कि वह राजकुमार की जान ही ले ले! मैं तुमको राजकुमार के बदले वीरसिंह के यहाँ भेज दूंगा।

हमारा दुश्मन इस रहस्य को समझ न पायगा। लेकिन इस काम में तुम्हारी जान का खतरा हो सकता है। मैं सोच नहीं पाता हूँ कि क्या करूँ?"

मंत्री के मुँह से ये बातें सुनते ही बलराम ने कहा—"मेरी मौत के हो जाने पर कोई ख़ास नुक़सान नहीं होता। मगर यदि राजकुमार ज़िंदा रहा, तो कभी न कभी वह अपने राज्य को पा सकता है! राजवंश का अंत भी न होगा। इसलिए आप बेफ़िक्र मुझे राजा वीरसिंह के पास भेज दीजिये। लेकिन मेरा आप से यही निवेदन है कि आप यह बात राजकुमार से गुप्त रखें। वरना राजकुमार इस काम में बाधा डाल सकता है।"

बलराम की बातों पर मंत्री को बड़ी प्रसन्नता हुई। उसे राजकुमार की पोशाकें पहनवा कर सिपाहियों के साथ दुर्ग के बाहर स्थित वीरसिंह के खेमे में भेजा।

बलराम के चले जाने के बाद राजकुमार ने उसकी खोज की। आखिर उसे असली बात मालूम हो गयी। वह पहले से ही जानता था कि क़िले के बाहर उसका चाचा घेरा डाले बैठा है और वह उसका अंत करने पर तुला हुआ है। इस हालत में बलराम को देख लोग भ्रम में पड़ सकते हैं और वह ख़तरे में फंस सकता है। इस विचार के आते ही राजकुमार ने झपट कर एक सिपाही के हाथ से तलवार छीन ली और क़िले के बाहर भाग गया।

बलराम जब वीरसिंह के खेमे के पास पहुँचा, तब सिपाहियों ने उसे राजकुमार ही समझा! वे सब खुशी से चिल्ला उठे–"ओह, ये तो हमारे राजकुमार हैं।" वीरसिंह ने सिपाहियों को दूर भेज दिया और बलराम के निकट आकर बोला–"राजकुमार, तुम बहुत दिन बाद मेरे हाथ लगे हो! अब बच कर नहीं जा सकते। तुम्हारा वध करके मैं अपने रास्ते के कांटे को दूर कर देता हूँ।" ये शब्द कहते वीरसिंह ने म्यान से तलवार निकाली। वीरसिंह के रौद्र रूप को देख कर भी बलराम विचलित नहीं हुआ। उसने कहा–"मेरा वध करके तुम सुखी बन नहीं सकोगे। तुम्हारी गद्दी भी हाथ से निकल जायगी।" वीरसिंह तलवार उठाये उस पर वार करने को हुआ, मगर बलराम भागने लगा।

इसी समय खेमे के पास खड़े राजकुमार गरज उठा–"ठहर जाओ।" वीरसिंह राजकुमार को देख पल-पर के लिए चकित रह गया। उसकी समझ में नहीं आया कि दो राजकुमार उसके खेमे में कैसे आ पहुँचे? अचानक उसके हाथ की तलवार छूट कर नीचे गिर पड़ी। मौक़ा पाकर राजकुमार सूर्यसिंह ने वीरसिंह पर आक्रमण किया और एक ही वार से उसका सर धड़ से अलग कर डाला।

वीरसिंह के मरते ही सभी सिपाही वहाँ पर इकट्ठे हो गये। जब उन्हें मालूम हुआ कि वीरसिंह की दुष्टता का फल उसे मिल गया, वे सब खुशी से नाच उठे और राजकुमार की जयकार करने लगे।

दूसरे ही दिन राजकुमार मंत्री और बलराम को साथ ले अपने देश को लौट आया। राजकुमार का राज्याभिषेक हुआ। पर कुछ समय तक मंत्री ने राजकुमार की ओर से राज्य का शासन संभाला और राजकुमार के युवा होते ही उसने बलराम को कई जागीरें दीं। उन दोनों के बीच ज़िंदगी पर दोस्ती क़ायम रही।

शिलारथ

[११]

[वृक्ष का पहरा देनेवाले युवक ने खड्गवर्मा तथा जीवदत्त को वृक्ष के कोटर वाले रहस्य मार्ग का पता दिया। वे दोनों उस मार्ग से होकर टीलेवाले दुर्ग के पास पहुँचे और वहाँ पर एक युवती को सिंह के हमले से बचाया। उसका पति जंगल से शिकारी जानवरों को ले आया और उन दोनों को अपने महल में ले गया। बाद—]

खड्गवर्मा और जीवदत्त ने जान लिया कि बाहर सुनाई देनेवाला वह कंठ पहरेदार का है। तुरंत खड्गवर्मा ने म्यान से तलवार निकाली और दर्वाजे के पास पहुँच कर किवाड़ खोल दिया।

महल की सीढ़ियों की ओर बढ़ने वाला युवक झट घूम पड़ा और उस ओर देखा जिस ओर से किवाड़ के खोलने की आवाज़ आयी। चांदनी की रोशनी में उसे खड्गवर्मा दिखाई दिया। उसके हाथ में एक तलवार चमक रही थी।

"अरे, तुम कौन हो?...तुम वही व्यक्ति नहीं हो जो जंगल में मुझे दिखाई दिया था? या उसके प्रेत तो नहीं हो? टीले वाले दुर्ग में पहुँच कर आज तक कोई ज़िंदा न रहा और रात को यहाँ पर नहीं सोये?" उस युवक ने अपने परशु को ऊपर उठाते हुए पूछा।

वह युवक कुछ और बोलने जा रहा था कि इतने में महाकाय ने ज़ोर से एक हड्डी फेंक दी जो उसकी पीठ पर जा लगी। वह चौंक कर सर उठा महाकाय की ओर ताक रहा था, तभी महाकाय ने डांट दिया–"अरे तुम बिलाव की तरह क्यों चिल्लाते हो? क्या तुम नहीं जानते कि यह मेरे भोजन का वक़्त है और इस वक़्त चिल्लाना मना है?"

युवक ने इसके बाद एक-दो बार अपने बहनोई की ओर देखा। तब खड्गवर्मा की ओर मुड़कर बोला–"वृक्ष के पास ये लोग मेरी लातें खाकर भाग आये हैं, इनको तुमने अभी तक क्यों ज़िंदा रखा? तुम्हारी वह हिम्मत कहाँ गयी? क्या इन्हें देख तुम डर तो नहीं गये? अच्छा, बताओ, वह दूसरा आदमी कहाँ?"

खड्गवर्मा का रोष बढ़ गया। वह तलवार चमकाते सीढ़ियों की ओर निकल पड़ा। पहरेदार की बातें उसे अपमानजनक मालूम हुईं। उसे इतना क्रोध आया कि उस पहरेदार को बचाने के लिए अगर महाकाय भी आगे आवे तो उसका काम भी तमाम करे।

इसी समय महाकाय ने हाथ उठाकर ऐसा संकेत किया, जिसका अर्थ था कि तुम शांत हो जाओ। तब बोला–"तुम

"अरे मूर्ख! बकवास बंद करके जाकर लेट जाओ! तुम चिल्लाते हुए फिर हमारी नींद हराम करोगे तो तुम्हारी चमड़ी उधेड़ डालूंगा! समझें!" खड्गवर्मा ने दर्वाज़ा पार कर आगे बढ़ते हुए सचेत किया।

वह युवक घबरा गया, फिर भी दो-तीन सीढ़ियाँ ऊपर चढ़कर धमकी देने लगा– "मेरी चमड़ी उधेड़ डालोगे? मुझे क्या कोई सिंह या बाघ समझते हो जो चमड़ी उधेड़ने जाओगे? चमड़ी उधेड़ते देख मैं क्या चुप रह जाऊँगा? तुम जैसे सैकड़ों लोगों को मैंने पल-भर में मौत के घाट उतार दिये हैं! देखते रहो, अभी तुमको अपने परशु की बलि दे देता हूँ..."

मेरे साले की बातों पर ध्यान न दो। यह बहुत समय से मुझ-जैसे गंधर्व के साथ रहता है, पर इनकी मानव प्रकृति अभी बदली नहीं। खेलने के लिए जो पालतू सिंह आया था, उसे देख इसकी बहन जान के डर से भाग गयी। मैं जानता हूँ कि यह भी अव्वल दर्जे का डरपोक है! जंगल में तुम लोगों से लात खाकर यहाँ पर मेरा आसरा देख तुमको डराना चाहता है। चाहे जो भी हो, तुम दोनों आज रात तक मेरे अतिथि हो। तुम इसकी बातों पर ध्यान न दो, जाकर सो जाओ, मैं इसकी बात देख लूँगा।"

खड्गवर्मा चुपचाप अपने कमरे में गया और किवाड़ बंद किये। जीवदत्त कमरे में बैठ कर बाहर होनेवाला हो-हल्ला सुन रहा था। खड्गवर्मा के कमरे में लौटते ही कहा–"महाकाय अपने को गंधर्व बताता है, क्या बात है?"

"कहता तो यही है, अच्छा हुआ... उसने अपने को भगवान नहीं बताया।" इन शब्दों के साथ खड्गवर्मा ने अपनी तलवार म्यान में रख दी और अपने बिस्तर पर लेट गया।

"खड्गवर्मा, महाकाय की बातों को यूँ ही काट न दो। वह एक आजानुबाहु ही नहीं, बल्कि सिंह और बाघों को पालतू बना कर शिकारी कुत्तों के रूप में इस्तेमाल करने की शक्ति रखनेवाला यह मामूली आदमी नहीं हो सकता।

बाक़ी दुनिया से दूर इस गुप्त प्रदेश में रहने का भी तो कोई कारण होगा? मेरी दृष्टि में यह कोई मामूली आदमी मालूम नहीं होता! यह कोई असाधारण व्यक्ति लगता है।" जीवदत्त ने कहा।

"तुम्हारी बातें सुनने पर ऐसा मालूम होता है कि इस महाकाय के कहे अनुसार वह गंधर्व भले ही न हो, मगर अर्ध गंधर्व तो ज़रूर होगा! कल सुबह तुम दोनों के बीच जो द्वन्द्व-युद्ध होनेवाला है, उसमें तुम उसको आसानी से जीत सकते हो न?" खड्गवर्मा ने जीवदत्त से शंका भरे दिल से पूछा।

इस पर जीवदत्त ने हँस कर उत्तर दिया—"जीत सकता हूँ, लेकिन इस वक़्त यह बताना मुश्किल है कि आसानी से जीत सकूँगा या बड़ी मुश्किल से! शायद हो सकता है कि मुझे अपने युद्ध-कौशल के साथ मंत्र-शास्त्र का भी प्रयोग करना पड़े। मैं समझता हूँ कि उसको मारे बिना अपने वश में करके उसके द्वारा हम कतिपय रहस्यों का पता लगा सकते हैं। यदि वह सचमुच गंधर्व है, तो विन्ध्य पर्वतों में स्थित शिलारथ के संबंध में हमें आवश्यक जानकारी दे सकता है। इसको अपने वश में करके हम अपना काम बना सकते हैं।"

"तुम जो सोचते हो, वह सत्य हो जाय तो क्या ही अच्छा होगा! अच्छा, मुझे नींद आ रही है। कल सुबह सोचेंगे कि हमें क्या करना है!" इन शब्दों के साथ खड्गवर्मा ने आँखें मूँद लीं।

जीवदत्त दूसरे दिन महाकाय के साथ होने वाले युद्ध के बारे में सोचते हुए निद्रा की गोद में जा खिसका।

सूर्योदय के होते ही महाकाय ने पहुँच कर खड्गवर्मा तथा जीवदत्त के सोनेवाले कमरे का दर्वाज़ा खटखटाया। खड्गवर्मा ने उठकर दर्वाज़ा खोला। महाकाय ने उसे एक पहाड़ी नाले का परिचय देकर

कहा–"तुम दोनों जल्द नहा-धोकर लौट आओ। मुझे शिकार खेलने जाने के पहले तुम दोनों को अपने पालतू जानवरों का आहार बनाना है। इस बात का ख्याल रखो कि देरी न हो जाय! समझें!"

"ओह! रात बीत गयी है, इसलिए हम शायद अब तुम्हारे अतिथि नहीं हैं। अच्छी बात है, हम एक घंटे के अंदर लौट आयेंगे। हमें भी तुम्हारी वीरता देखने की उत्सुकता है। तुम तैयार रहो।" खड्गवर्मा ने उत्तर दिया।

महाकाय मुस्कुराते चुपचाप चला गया। खड्गवर्मा ने जीवदत्त को जगाया और महाकाय की बातों का परिचय दिया। जीवदत्त मौन रह कर सर हिलाते रह गया। इसके बाद दोनों महल की सीढ़ियों को पार कर मैदान से होते हुए एक पहाड़ी नाले के पास पहुँचे। नाले में स्नान करके निकट के पेड़ों से फल तोड़ लिये। फल खाने के बाद टीले वाले महल की ओर चल पड़े।

टीलेवाले दुर्ग के समीप एक मवेशीखाने के पास उन्हें महाकाय, उसकी पत्नी और परशुवाला युवक भी दिखाई दिये। महाकाय ने जीवदत्त से कहा–"देखो, इस घुड़साल में से तुम अपनी पसंद के एक बढ़िया घोड़ा चुन लो।"

जीवदत्त और खड्गवर्मा ने घुड़साल में प्रवेश किया। वहाँ पर उन्हें दस-बारह उत्तम नस्ल के घोड़े दिखायी दिये। जीवदत्त ने उनकी पीठों पर हाथ थपथपा कर देखा। सब घोड़ों की जाँच करने के बाद तेज चलनेवाले एक ताक़तवाले घोड़े को खोल कर उसे बाहर ले आया।

महाकाय ने जीवदत्त द्वारा लाये गये घोड़े को देख कहा–"वाह, तुमने मेरे घोड़ों में से सबसे उत्तम घोड़े को चुन लिया है। लगता है कि तुम घोड़ों के नस्ल की अच्छी जानकारी रखते हो। कई साल पहले मेरे माता-पिता इसी घोड़े के पुरखे पर सवार हो विन्ध्य पर्वतों के

प्रदेश से यहाँ पर प्रवासी बन कर आये थे, इसलिए यह घोड़ा मेरेलिए बड़ा ही प्रिय है।"

"ऐसी बात है! तब तो तुम्हारे घमण्ड को चूर करने के वाद में इसी घोड़े पर सवार हो अपने मित्र के साथ उसी विन्ध्य पर्वत वाले प्रदेश में जाऊँगा।" जीवदत्त ने कहा।

यह बात सुनने पर महाकाय को बड़ा क्रोध आया। उसने मूँछों पर ताव देते हुए जीवदत्त की ओर आँखें लाल करके देखा। तब घुड़साल में जाकर एक घोड़े को खोल लाया। उसने परशुवाले पहरेदार को आदेश दिया कि दोनों अश्वों पर जीन व लगाम कस कर ले आवे। पहरेदार ने वैसा ही किया। महाकाय और जीवदत्त अपने अपने घोड़े पर सवार हो गये। महाकाय के हाथ में एक गदा था और जीवदत्त के हाथ में वही पुराना दण्ड था।

"अब तक मैंने तुम्हारा नाम नहीं जाना। तुमको यम लोक में भेजने के पहले मैं तुम्हारा नाम जानना चाहता हूँ। बताओ, तुम्हारा नाम क्या है?" महाकाय ने जीवदत्त से पूछा।

"मेरा नाम जीवदत्त है। मेरे मित्र का नाम खड्गवर्मा है। मैंने तुमको मार डालना नहीं चाहा, केवल तुम्हारे हाथ-पैर तोड़कर छोड़ देना चाहता हूँ, फिर भी मेरे लिए तुम्हारा नाम जान लेना उचित होगा। क्या नाम है तुम्हारा?" जीवदत्त ने पूछा।

"मेरा नाम वसुदेव है। पर तुम दूसरे ही क्षण मरने वाले हो, इसलिए मेरा नाम जान लेने से तुम्हारे लिए क्या प्रयोजन है? अब तुम मरने के लिए तैयार हो जाओ।" महाकाय ने इन शब्दों के साथ गदा उठाया, तब दोनों ने अपने अपने घोड़े को आगे बढ़ाया।

दोनों घोड़ों के बीच क़रीब सौ फुट की दूरी थी। वसुदेव ने जब अपने घोड़े को

आगे बढ़ाया, तभी जीवदत्त ने भी अपने घोड़े को ललकारा। दोनों घोड़े तेज़ी से आगे बढ़े। वसुदेव जब जीवदत्त के निकट आ रहा था, तब जीवदत्त ने अपने घोड़े की लगाम को खींचा, जिससे उसके घोड़े का रुख बदल गया, तब वसुदेव का घोड़ा जीवदत्त की बगल में से गुज़रने लगा, मौक़ा पाकर जीवदत्त ने अपने दण्ड से वसुदेव के सर पर प्रहार किया। वसुदेव ने भी जीवदत्त के सर पर अपने गदे का प्रहार करना चाहा, पर जीवदत्त झट अपना सर झुका कर बच गया।

जीवदत्त के दण्ड के प्रहार से वसुदेव का सर चकराया। उसे संदेह हुआ कि कहीं साधारण मानव के हाथ में ऐसी ताक़त हो सकती है। फिर सोचा, संभवत: उस दण्ड में मंत्र की शक्ति होगी, वरना एक मामूली युवक को उसके साथ द्वन्द्व युद्ध के लिए तैयार होने की कैसी हिम्मत होनी चाहिए?

दूसरी बार वसुदेव अपने घोड़े को जीवदत्त की ओर बढ़ाते बोला—"हे जीवदत्त! तुम देखने में क्षत्रिय के वेष में हो, पर वास्तव में ब्राह्मण मंत्रवेत्ता लगते हो। सच बताओ, तुम क्षत्रिय हो या ब्राह्मण?" इसके बाद वह गदा उठाये जीवदत्त की छाती पर प्रहार करने गया।

जीवदत्त ने उच्च स्वर में किसी मंत्र का उच्चाटन करते वसुदेव के गदे

को अपने बायें हाथ से हटाया और दायें हाथ वाले दण्ड से घोड़े की गर्दन पर ज़ोर से दे मारा। उस चोट से घोड़े का सर ज़मीन छू गया। उसके पिछले पैर ऊपर उठे। उसके गिरने के पहले ही वसुदेव की पकड़ ढीली होने के कारण जमीन पर गिर पड़ा और कराहते हुये चिल्लाते थोड़ी दूर लुढ़कता गया।

जीवदत्त अपने घोड़े से उछल कर उतर पड़ा और खड़े हो जाने का प्रयत्न करने वाले वसुदेव के निकट जाकर बोला–"लगता है, तुम्हारा एक ही पैर टूट गया है, क्या गदा पकड़ने वाले हाथ को भी तोड़ दूँ या हार मान जाओगे?"

वसुदेव फिर उठने का प्रयत्न करने लगा, मगर संभव न हुआ। तब वह जीवदत्त की आँखों में दीनता पूर्वक देखते बोला–"मेरे हाथ-पैर नहीं टूटे, लेकिन मेरी कमर टूट गयी है। तुम्हीं जीत गये हो! मैं तुम्हारे मंत्र की महिमा और भुज-बल पर प्रसन्न हो गया हूँ। तुम जैसा एक सहायक होता तो मेरे पिताजी यक्षों से हार कर विन्ध्य पर्वतों को छोड़ यहाँ पर भाग न आते!"

वसुदेव की बातों पर चकित हो जीवदत्त कुछ कहने ही जा रहा था कि तभी खड्गवर्मा ज़ोर से चिल्ला उठा। तब तक उस द्वन्द्व युद्ध को परशुवाला पहरेदार दूर पर खड़े हो देख रहा था, मगर वह अपने बहनोई के नीचे गिरते ही क्रोध में आया और परशु उठाये जीवदत्त की ओर बढ़ने लगा। खड्गवर्मा ने एक बार उसे सचेत किया कि वह रुक जाय, वरना उसकी जान की खैर नहीं। मगर वह आगे बढ़ा चला आ रहा था, इस पर लाचार हो अपनी तलवार की मूठ से उस युवक के सिर पर दे मारा। वह युवक एक बार चीख उठा और वृक्ष की भांति टूट कर औंधे मुँह धड़ाम से दूर जा गिरा।

(और है)

क़ीमती इलाज

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया। पेड़ से शव उतार कर कंधे पर डाल सदा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा–"राजन, मैं नहीं जानता कि कौन लालची तुमको अपनी बातों से बहकाकर इस तरह तकलीफ़ दे रहा है। ऐसे लोगों पर विश्वास न करके मणिवर्मा की भांति उनकी परीक्षा लेना आवश्यक है। श्रम को भुलाने के लिए मैं तुमको मणिवर्मा की कहानी सुनाता हूँ, सुनो।"

बेताल यों कहने लगा: प्राचीनकाल में पुरंदरदेश पर मणिवर्मा नामक राजा राज्य करता था। उसका राज्य संपन्न था और प्रजा सुखी थी। मगर राजा मणिवर्मा को न सुख प्राप्त था और न शांति ही। वह पृष्ठ व्रण से परेशान था। अनेक देशों के वैद्यों ने आकर इलाज

बेताल कथाएँ

किया, मगर कोई फ़ायदा न रहा। राजा इसी चिंता में घुला जा रहा था।

राजा मणिवर्मा यह सोचकर निराश हो गया था कि उसके पृष्ठ व्रण का कोई भी वैद्य इलाज़ न कर सकेगा, इसलिए उसकी मौत निश्चित है। ऐसी हालत में किसी देश का एक वैद्य आ पहुँचा और उसने राजा के पृष्ठ व्रण का इलाज करने की आशा बंधायी।

कई वैद्यों ने राजा को आश्वासन दिया था कि वे व्रण का इलाज़ कर सकेंगे, लेकिन इलाज़ न कर पाये थे, इस वजह से राजा ने उस नये वैद्य की बातों पर विश्वास न किया। मगर वैद्य अपना हठ छोड़ने को तैयार न था। आखिर राजा ने लाचार होकर वैद्य से पूछा—"दवाई का कितना खर्च बैठेगा?"

"महाराज, कम से कम दो हज़ार अशर्फ़ियाँ चाहिए।" वैद्य ने जवाब दिया।

"दवा तैयार करने में कितना समय लगेगा?" राजा ने फिर पूछा।

"एक महीना लगेगा।" वैद्य ने कहा।

राजा ने वैद्य को दो हज़ार अशर्फ़ियाँ दिलायीं और उसके ठहरने का राजमहल के समीप में उचित इंतज़ाम करवाया।

दो-तीन दिन बीत गये। चौथे दिन सवेरे वैद्य के पास एक गरीब आया। उसके कपड़े फटे-पुराने थे। देखने में वह कंगाल जैसा लगता था। उसने वैद्य से मिन्नत की—"वैद्यराज! मैं पृष्ठ व्रण से परेशान हूँ। सुनते हैं कि यह व्रण सिर्फ़ राजा-महाराजाओं के लिए होता है। मगर मुझ जैसे गरीब को भी यह व्रण सता रहा है। न मालूम मैंने पूर्व जन्म में कौन-सा पाप किया है। यदि आपसे बन पड़े तो इसका इलाज कीजिये, आपका बड़ा पुन्न होगा। आपके एहसान को मैं ज़िंदगी भर भूल नहीं सकता।"

उस गरीब पर वैद्य को दया आयी।

"देखोजी, तुम्हारा व्रण बड़ी आसानी से ठीक हो जायगा। मेरे कहे मुताबिक़

करो। यहाँ से पाँच-छे कोस की दूरी पर एक तालाब है। उसकी पश्चिमी मेंड पर चन्द्रमुखी नामक एक पेड़ है। उसके पत्ते खुशबूदार हैं और अर्द्ध चन्द्रकार में होंगे। सवेरे-सवेरे मुट्ठी भर पत्ते तोड़कर खा जाओ। उन पत्तों का चूर्ण बनाकर व्रण पर लेपन करो। तीन दिनों के अन्दर व्रण भर जायगा।" वैद्य ने गरीब को सलाह दी। वह गरीब आदमी वैद्य को धन्यवाद दे चला गया।

महीने भर बाद वैद्य पृष्ठ व्रण की दवा तैयार करके राजा की सेवा में पहुँचा और बोला–"महाराज, मैं आपके पृष्ठ व्रण की दवा तैयार करके ले आया हूँ।"

"मेरा व्रण तो कभी का भर गया है! अब दवाई किसलिये?" राजा ने कहा।

वैद्य ने चकित होकर पूछा–"महाराज, मुझे यह सुनकर बड़ी खुशी हो रही है। मगर यह बताइये कि किसने आपके व्रण का इलाज़ किया? आप तो एक महीने पहले इसी व्रण से परेशान थे?"

"अरे, तुम्हीं ने तो मेरा इलाज़ किया था? तुम्हारे पास एक दिन जो गरीब आदमी आया था, वह मैं ही था।" राजा ने कहा।

इसके बाद राजा ने वैद्य को पचास हज़ार अशर्फ़िया पुरस्कार में दीं और इस तरह उसका सम्मान करके भिजवा दिया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा– "राजन, मणिवर्मा वैद्य के पास गरीब के वेष में क्यों गया था? क्या यह जानने के लिए कि वैद्य ने उससे दवा का मूल्य ज्यादा मांगा है? यदि ऐसी बात हो तो उसी वैद्य को पचास हज़ार अशर्फ़ियाँ देकर राजा ने उसका सम्मान क्यों किया? राजा के सामने वैद्य ने झूठ कहा था, इसके लिए राजा ने उसे दण्ड क्यों नहीं दिया? बिना खर्च के चन्द दिनों में तैयार होनेवाली दवाई के वास्ते वैद्य ने दो हज़ार अशर्फ़ियाँ और एक महीने की मोहलत क्यों ली? इन सवालों का जवाब जानकर भी न दोगे तो तुम्हारा सर टुकड़े-टुकड़े हो जायगा।"

इस पर विक्रमार्क ने उत्तर दिया– "राजा मणिवर्मा का जब वैद्यों पर पूर्ण रूप से विश्वास उठ गया था, ऐसी हालत में वैद्य उसके पास पहुँचा। इसलिए यदि वैद्य यह न कहे कि वह जो दवा देनेवाला है, वह क़ीमती है और उसके तैयार करने में भी काफ़ी समय लगता है, तो राजा उस पर विश्वास न करेगा। इस कारण वैद्य राजा से झूठ बोला। राजा के गरीब वेष में जाने का भी एक कारण है। राजा के मन में यह विश्वास न था कि पृष्ठ व्रण का भी इलाज हो सकता है। हो सकता है कि धन के लोभ में पड़कर वैद्य ने राजा को प्रलोभन दिया हो! उसी बीमारीवाला कोई गरीब अगर वैद्य के पास जावे तो वह सच्ची बात कह सकता है कि पृष्ठ व्रण का कोई इलाज नहीं है। यही सच्ची बात जानने के लिए राजा गरीब के वेष में वैद्य के पास गया था। वैद्य के इलाज बताने पर राजा को असली बात मालूम हो गयी कि वैद्य ने झूठ क्यों कहा था? राजा के लिए केवल इलाज से मतलब था। वैद्य के सच बोलने से नहीं। उसका इलाज हो गया था, इसलिए राजा ने वैद्य का सत्कार किया।"

राजा के इस तरह मौन भंग के होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पेड़ पर जा बैठा।

(कल्पित)

पंचकल्याणी

[४]

श्यामल नगर के राजा के पूछने पर वीरदास ने यों कहा: राक्षस की गुफा से लौटने के थोड़े दिन बाद मेरे पिता ने मेरी शादी की, इसलिए मैं देशाटन करना छोड़ कर घर पर ही रहने लगा। मगर जो देशाटन का शौक रखता है, वह घर पर थोड़े ही चुप बैठा रह सकता है? इसलिए मैं एक दिन समुद्र के किनारे शिकार खेलने चला गया। वहाँ पर मुझे एक सुंदर नाव दिखायी दी। कुतूहलवश उसे देखने में नाव के भीतर पहुँचा। उस में असंख्य क़ीमती और सुंदर वस्तुएँ थीं। मैं उन वस्तुओं को देख अचरज में आ गया, तभी वह नाव चल पड़ी।

जब मुझे इस बात का भान हुआ कि नाव सुमुद्र पर चली जा रही है, तब उसकी गति तेज हो गयी। लेकिन मैं घबराया नहीं। आखिर वह नाव समुद्र के दूसरे किनारे जा लगी। वहाँ पर एक टापू था जिसे मैं ने कभी न देखा था। मैं नाव से उतर कर उस टापू पर पैदल चलने लगा। तभी वह नाव हिली और उसी रास्ते तेजी से जाने लगी, जिस रास्ते से वह आयी थी। इसलिए मैं उस टापू पर अकेले रह गया।

मैंने टापू पर घूमकर देखा, कहीं मुझे कोई व्यक्ति या घर दिखाई न दिया। मैं पास के एक टीले पर चढ़ गया। वहाँ पर एक दृश्य को देख मैं आवाक़ रह गया। क्योंकि वहाँ पर पेड़ों के बीच एक युवती एक शिशु के कंठ पर तलवार टिकाकर भोंकने जा रही थी।

वह शिशु किलकार मारते चमकनेवाली उस तलवार को अपने नन्हें हाथों से पकड़ने

रमणलाल

की कोशिश कर रहा था। इसे देख वह युवती तलवार को फेंककर ज़ोर से चिल्ला पड़ी–"यह काम मुझ से नहीं बनेगा।"

मुझे उस औरत की हालत पर दया आयी। उसके निकट जाकर पूछा–"तुम यहाँ पर क्या करती हो?"

मेरी आवाज़ सुनकर युवती चौंक पड़ी और बच्चे को अपनी छाती से चिपका कर भागने लगी। मगर दौड़कर मैं उसके पास पहुँचा और बोला–"डरो मत, मैं भी तुम्हारी जैसी हालत में हूँ।"

"यह बात सच हो सकती है, मगर तुम यहाँ पर आये कैसे?" युवती ने पूछा। मैंने अपनी सारी कहानी सुनायी।

"मैं भी तुम्हारे जैसे आ पहुँची हूँ, एक दिन अपने बच्चे को गोद में लिये मैं समुद्र के किनारे टहल रही थी। वहाँ पर एक सुंदर नाव को देख मैंने उस पर क़दम रखा। जब मुझे असली हालत मालूम हुयी, तब तक मैं इस टापू पर पहुँच गयी थी। मुझे मालूम न था कि इस टापू पर क़दम रखना ख़तरे से खाली नहीं, नाव से उतरते ही वह चली गयी। मैं यहाँ पर फँस गयी हूँ, तुम भी यहाँ से बचकर नहीं जा सकते।" युवती ने समझाया।

मैं भी उस युवती के पीछे पत्थरों से बनाये गये एक रसोई घर में पहुँचा। एक ओर बड़ी हाँड़ी रखी गयी थी, उसके नीचे आग सुलग रही थी।

मैंने युवती से पूछा–"तुम अपने पुत्र को क्यों मार रही थी?"

"मैं अपनी बदक़िस्मती की बात क्या कहूँ? राक्षस का आदेश हुआ है कि मैं अपने पुत्र के माँस को पकाकर उसे खिलाऊँ? इसीलिए मैंने हाँडी के नीचे आग सुलगा रखी है।" युवती ने आँसू पोंछते हुए उत्तर दिया।

हांडी का पानी जल्द गरम न हो, इस ख्याल से युवती ने कुछ जलती लकड़ियों को निकाला।

उसी वक़्त ज़मीन थर्रा उठी। मालूम हुआ कि राक्षस कहीं से चला आ रहा है।

"अब मैं क्या करूँ?" युवती घबराते हुये स्वर में बोली।

"तुम अपने बच्चे को कहीं छिपा कर रख दो। मैं हांडी के भीतर जा बैठूंगा।" इन शब्दों के साथ मैं हांड़ी के भीतर जा बैठा और ऊपर का ढक्कन बंद किया। भाग्यावश पानी गरम न हुआ था।

राक्षस ने प्रवेश करते ही पूछा–"क्या बच्चे के मांस को पकाया?"

"अभी तक पानी खौल नहीं रहा है।" युवती ने जवाब दिया।

मैंने पानी के बुलबुलों की तरह आवाज़ की। राक्षस ने सोचा कि मांस के पकने की वजह से यह आवाज़ हो रही है। ठठाकर हँसते हुए उसने चूल्हे में और लकड़ियां ठूंस दीं। फिर हांड़ी के निकट ही लेट गया।

धीरे धीरे हांड़ी का पानी खौलने लगा। मैंने सोचा कि पानी के साथ मुझे भी पकना होगा। हांड़ी का निचला भाग काफ़ी गरम होता जा रहा था जो मेरे लिए असहनीय था। उसी समय मैंने देखा कि राक्षस खुर्राटे लेने लगा है। युवती ने हांड़ी का ढक्कन उठाकर धीरे से पूछा–"क्या तुम अभी तक जिंदा हो?"

"हां, हां, अभी जान बची है?" मैंने जवाब दिया। इसके बाद हांड़ी में खड़े होकर देखा। राक्षस गहरी नींद में है। बड़ी मुश्किल से मैं हांड़ी से बाहर आया। लेकिन समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करूँ?

तभी उस युवती ने राक्षस के भाले की ओर इशारा किया। वह बहुत भारी था। मैंने उस भाले को पकड़कर उठाया। बहुत ही भारी था, मगर मेरी मौत निश्चित थी। इसलिए अपनी सारी ताक़त लगा कर मैंने दोनों हाथों से भाला उठाया और राक्षस की आँखों के बीच घुसेड़ दिया। वह भाला राक्षस के सर को

पार कर ज़मीन में एक बित्ते भर गहराई तक धंस गया। राक्षस आह तक भरे बिना मर गया। मेरी खुशी का कोई ठिकाना न रहा।

मैं उस युवती और उसके बच्चे को साथ ले समुद्र के किनारे आया। वहाँ पर नाव पहले से ही तैयार थी। हम उस पर सवार हुए। नाव ने हमें दूसरे किनारे पर पहुँचा दिया। युवती अपने बच्चे को लेकर अपने रास्ते चली गयी। मैं भी अपने घर पहुँचा।

वीरदास ने यह घटना राजा को सुनाकर कहा–"शायद महाराज इस पर विश्वास नहीं करेंगे?"

उसी समय राजा के पीछे से एक अधेड़ उम्र की औरत आयी और आश्चर्य से पूछा–"बेटा, मुझे उस राक्षस के चंगुल से तुम ने ही उस दिन बचाया था?"

वीरदास ने उस औरत को पहचानने का प्रयत्न करते हुए कहा–"हाँ माँ! मैंने ही तुमको बचाया था।"

"तुमने उस दिन जिस बच्चे को बचाया था, वह यही राजा है। हम दोनों ज़िंदगी-भर तुम्हारे लिए एहसानमंद रहेंगे।"

इतने दिन बाद फिर से वे सब एक जगह मिल सके। इस बात का उन सब को बड़ा आनंद आया।

"वीरदास, तुम सचमुच बड़े वीर हो। तुम जिन खतरों से गुज़र चुके हो, वे असाधारण हैं। मैं तुम को अपने पंचकल्याणी घोड़े के साथ खजाने के अमूल्य रत्न भी दे देता हूँ।" श्यामल नगर के राजा ने कहा।

उस रात को वीरदास के सम्मान में एक बहुत बड़ी दावत दी गयी।

दूसरे दिन वीरदास महाराजा तथा राजमाता से विदा लेकर अपने पुत्रों, पंचकल्याणी तथा अमूल्य रत्नों को साथ ले अपने शहर को लौट पड़ा।

पंचकल्याणी को पाकर राजा ने वीरदास के पुत्रों को क्षमा कर दिया। (समाप्त)

ख़ुदा की मर्ज़ी

बस्त्रा नगर में मजीद नामक एक नौजवान था। वह बड़ा आलसी था। साथ ही हठी भी था। वह मनमाने करता था और अपने माँ-बाप को छोड़ दूसरों की बिलकुल परवाह न करता था।

मजीद का बाप एक दर्जी था। उसकी जो थोड़ी-बहुत कमाई होती थी, उसी से उनका गुजारा होता था। एक दिन मजीद के बाप ने उससे कहा—"अरे तुम्हारी आवारागर्दी से मैं तंग आ गया हूँ। तुम हस्सन बस्त्री के पास जाकर उनके उपदेश सुनो, शायद सुधर जाओगे!"

हसन बस्त्री एक धार्मिक गुरु था, जो बस्त्रा नगर के लोगों को उपदेश दिया करता था। मजीद जब बस्त्री के पास पहुँचा, तब वह लोगों से यों कह रहा था—"हर एक प्राणी के लिए खाना-पानी देनेवाला ख़ुदा होता है। वह भलीभांति जानता है कि किसको क्या चाहिए, कितना चाहिए और उसका कैसा उपकार करना चाहिए। उसके निर्णय को कोई भी ताक़त बदल नहीं सकती! ख़ुदा को जो मंजूर है, वह होकर ही रहेगा।"

ये बातें सुनकर मजीद गुरु के निकट पहुँचा और पूछा—"हज़रत, अभी आपने जो बातें कहीं, उनका अर्थ क्या है? ज़रा विस्तार के साथ समझा दीजिये।"

हसन बस्त्री ने मुस्कुराकर कहा—"बेटा, मिसाल के तौर पर मैं तुम्हें बताता हूँ कि अगर ख़ुदा तुम्हें कोई चीज़ खिलाना चाहे तो तुम उसे खाकर ही रहोगे। उसे रोकना किसी के लिए भी मुमक़िन न होगा।"

"ऐसी बात है? तब तो बताइये कि आज ख़ुदा मुझे क्या खिलानेवाला है?" मजीद ने मज़ाक करते हुए पूछा।

किशोर कुमार

हसन बस्त्री ने मजीद की ओर एड़ी से लेकर चोटी तक देखकर जवाब दिया– "आज तुम्हारे चेहरे पर यह लिखा हुआ है कि तुम ज़रूर खीर खाओगे।"

"न खाऊँ तो?" मजीद ने पूछा।

"तुम शक मत करो। आज तुम ज़रूर खीर खाओगे।" हसन बस्त्री ने कहा।

"अगर मैं खाना न चाहूँ तो?" मजीद ने फिर पूछा।

"तुम खाना चाहो, तब भी खाओगे और न खाना चाहो, तब भी तुम्हें खाना पड़ेगा। मैं कहता हूँ कि इस से तुम बच नहीं सकते।" हसन बस्त्री ने स्पष्ट शब्दों में कहा।

"मैं आज खीर बिलकुल न खाऊँगा। देखूँगा कि खुदा मुझसे कैसे खिलाता है?" इन शब्दों के साथ मजीद गुस्से में वहाँ से चला गया।

मजीद ने सोचा कि घर लौटने पर उसकी माँ खीर बनाकर उसे खिलाने को कह सकती है या अड़ोस-पड़ोस के लोग खीर लाकर दे तो उसे खाना पड़ेगा। यह सोचकर वह जंगल की ओर चल पड़ा। वह गाँव से दूर चला गया। आखिर जलती रेत पर चलकर एक पेड़ की छाया में पहुँचा और आराम करने लगा।

उसी वक़्त उसे डर लगा कि कोई मुसाफ़िर आकर उससे खीर खाने का अनुरोध कर सकता है। झट वह पेड़ पर चढ़ गया। घने पत्तों के बीच जा बैठा। थोड़ी देर में वह झपकियाँ लेने लगा।

एक घंटे बाद बरात का एक दल बस्त्रा जाते उधर आ पहुँचा। पेड़ की छाया को देखते ही उनकी जान में जान आ गयी; क्योंकि वे सब एक रेगिस्तान से होकर आये थे। औरत-मर्द, बूढ़े व बच्चे सबने उस पेड़ के नीचे पड़ाव डाला। उस दल ने अपने ऊँटों को पेड़ों से बाँध दिया। खाने का वक़्त हो गया था, इसलिए रसोई बनाकर खाने के बाद वहाँ से अपनी यात्रा चालू रखने का निश्चय किया।

दल के लोगों ने तरह-तरह के पक्वान्न बनाने को सुझाया। मगर आखिर सबने सोचा कि खीर बनाना आसान है, इसलिए वही बनाया जाय। इस निर्णय के होते ही चूल्हा जलाकर खीर बनायी गयी।

सब लोग बैठकर खीर खाने की तैयारी करने लगे, तभी चोरों का एक दल घोड़ों पर उधर आ पहुँचा। बरात के लोग डर गये। अपने अपने समान ऊँटों पर लाद कर भाग खड़े हुए। चोरों ने आकर देखा, वहाँ पर एक भी आदमी न था। पर चूल्हे पर खीर चढ़ी थी।

चोर भूख से परेशान थे। खीर को देखते ही उनकी बांछें खिल गयीं।

"कोई हमारे वास्ते यह खीर छोड़ गया है। हम इसे खा लेंगे।" एक चोर ने सुझाया।

"ठहरो, उस खीर को मत छुओ।" चोरों के सरदार ने कहा।

सब ने आश्चर्य के साथ सरदार की ओर देखा।

"अरे, तुम लोग पागल तो नहीं हो गये हो? कोई एक साथ इतनी खीर छोड़ जायगा? हमें मारने के लिए इसमें जहर मिला दिया होगा।" चोरों के सरदार ने कहा।

चोरों के दिलों में शंका पैदा हुई। किसी ने भी खीर का स्पर्श नहीं किया।

"हमें मारने के लिए प्रयत्न करनेवाले ज़रूर एक आदमी को छोड़ गये होंगे, ताकि वह उन्हें यह सूचना दे सके कि हम मर गये कि नहीं। तुम लोग उस आदमी को ढूंढ़ो।" चोरों के सरदार ने अपने अनुचरों से कहा।

चोरों ने ढूंढ़ना शुरू किया। उनमें से एक ने मजीद का पता लगाया और चिल्ला पड़ा—"लो, देखो। पेड़ की डालों में एक आदमी छिपा बैठा है।" सब ने पेड़ पर देखा। मजीद थर-थर काँपने लगा।

"भाई साहब, पेड़ से उतर आओ। खीर खा लो।" सरदार ने मजीद को बुलाया।

मजीद ने पेड़ से उतरने से इनकार किया, जिससे चोरों की शंका और बढ़ गयी।

"खीर में इसने ज़हर मिलाया है। इसीलिए वह पेड़ से उतरने से इनकार कर रहा है। उसे ज़बर्दस्ती उतार दो।" सरदार ने गरजकर कहा।

एक व्यक्ति पेड़ पर चढ़ गया। मजीद को कंधे पर डालकर नीचे लाया और उसे जमीन पर पटक दिया। दूसरे ने थाली में खीर भरकर कहा—"इसे खा लो।"

"मुझे तंग न करो। मैं खीर नहीं खाऊंगा।" मजीद रोने लगा।

"अरे बदमाश! खीर में ज़हर मिलाकर हम सबको मार डालना चाहते हो!" इन शब्दों के साथ सरदार ने अपने अनुचरों की ओर देखा।

तुरंत चोरों ने मजीद के हाथ-पैर क़सकर पकड़ लिये। एक ने मजीद के मुँह में ज़बर्दस्ती खीर डाल दी। दूसरे ने उसकी नाक पकड़कर बंद की, तो मजीद ने गटककर खीर निगल डाली।

चोर इससे संतुष्ट नहीं हुए, बल्कि मजीद को पेट भर खीर पिलायी। फिर भी मजीद ज़िंदा रहा। इससे चोरों को यक़ीन हो गया कि खीर में ज़हर मिलाया नहीं गया है। सारी खीर सफाचट कर चोर सब अपने रास्ते चले गये।
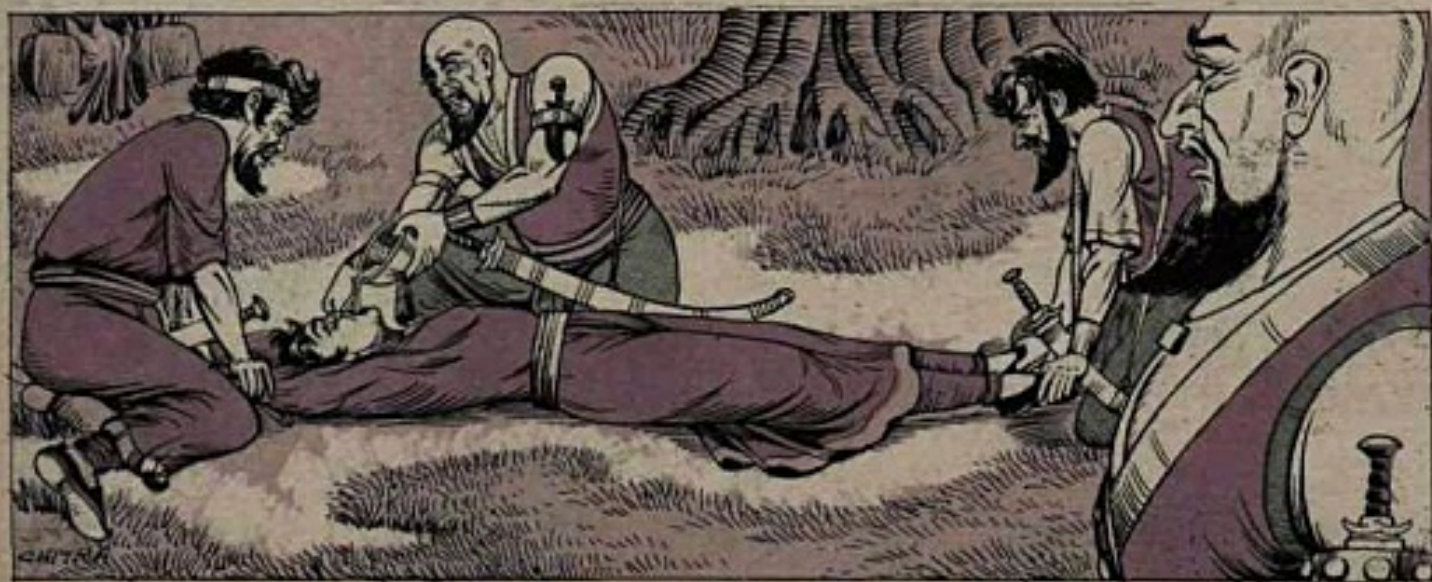
बड़ा कौन है ?

एक बार इन्द्र और शनीचर के बीच विवाद उठ खड़ा हुआ। इस पर इन्द्र ने कहा–"मैं तीनों लोकों का अधिपति हूँ। चर और अचर सब मेरी आज्ञा पर चलते हैं। इसलिए मैं तुमसे बड़ा हूँ।"

"ब्रह्मा, विष्णु और ईश्वर भी मेरी पकड़ से बच नहीं सकते। इसलिए मैं तुम से बड़ा हूँ। फिर भी यह साबित करने के लिए कल सवेरे से लेकर शाम तक मैं तुमको अपने अधीन रखूँगा। हो सके तो तुम बचने की कोशिश करो।" शनीचर ने कहा।

शनीचर की पकड़ से बचने के लिए दूसरे ही दिन सवेरे इन्द्र एक निर्जन वन में चला गया और वहाँ पर एक पेड़ के कोटर में शाम तक छिपा रहा। मगर शनीचर का वहाँ पर पता न था। शाम हो गयी। तब इन्द्र विजय की खुशी में कोटर से बाहर आया और शनीचर के पास जाकर बोला–"अरे, तुम मेरे पास पटक भी नहीं सके! हार मानते हो न?"

इस पर शनीचर ने मुस्कुराते हुए जवाब दिया–"मैं तुम पर हावी हो गया था, इसलिए तो तुम तीनों लोकों का राजा होकर भी दिन भर निर्जन वन के पेड़ के कोटर में छिपे रहे!" इस पर इन्द्र ने अपनी हार मान ली।

जादू की करामात

बात बहुत पुरानी है। ताम्रलिप्ति नामक शहर में बलाकगुप्त नामक एक सौदागर था। शेखरपाल नामक एक जादूगर से उसकी गहरी दोस्ती थी। बलाकगुप्त व्यापार के कामों में तथा शेखरपाल अपने जादू का प्रदर्शन करने सदा देशाटन किया करते थे। साल में सिर्फ़ दो महीने वे दोनों घर पर रहकर जादू की विद्या पर चर्चा करते मज़े में अपना समय बिता देते थे।

यों तो बलाकगुप्त अनेक देश घूम चुका था, मगर वह कभी मणिपुर राज्य में नहीं गया था। इसलिए एक साल उसने मणिपुर राज्य की यात्रा की। बलाकगुप्त के दोस्तों ने समझाया कि वह मणिपुर राज्य की यात्रा स्थगित कर दे। क्योंकि मणिपुर राज्य में प्रवेश करना चाहे तो रास्ते में घने जंगल पड़ते थे जिससे चोर और डाकुओं का भय बना रहता था। फिर भी बलाकगुप्त गोपाल नामक अपने एक नौकर को साथ ले क़ीमती माल लेकर चल पड़ा। लगातार छे दिन की यात्रा करके आख़िर वे मणिपुर राज्य की सीमा पर स्थित पर्वत श्रेणी की तलहटी में जा पहुँचे।

अंधेरा होने को था। तब नौकर गोपाल ने अपने मालिक से कहा–"मालिक, रात होने जा रही है, क्या हम आज रात को उस गुफा में आराम कर ले?"

"अच्छी बात है।" बलाकगुप्त ने कहा।

दोनों गुफा में प्रवेश करने जा ही रहे थे कि उन्हें घोड़ों की टापों की आवाज़ सुनायी दी। चन्द मिनट बाद कुछ घुड़सवारों ने उनको घेर लिया। उनके पास तरह-तरह के हथियार थे।

"तुम लोग कौन हो?" बलाकगुप्त ने हिम्मत बटोरकर पूछा।

ए. सी. सरकार, जादूगर

"तुम लोगों की जान लेने के लिए आये हुए यमदूत हैं, हम!" चोरों के सरदार ने अट्टहास करते हुए उत्तर दिया।

बलाकगुप्त ने झट म्यान से तलवार निकाली, किंतु दूसरे ही क्षण दो चोरों ने झपट कर उसे पकड़ लिया। इसके बाद चोरों ने बलाकगुप्त के क़ीमती माल को लूट लिया। दोनों को बन्दी बनाकर जब चोर उन अमूल्य वस्तुओं को बाँटने लगे, तब उनकी खुशी का कोई ठिकाना न रहा।

"तुम लोगों को जो चाहिए था, सो मिल गया। अब हमें छोड़ दो।" बलाकगुप्त ने चोरों के सरदार से पूछा।

"नहीं, ऐसा नहीं हो सकता। हम तुम दोनों को कालीमाता की बलि चढ़ायेंगे।" चोरों के सरदार ने कहा।

सरदार का संकेत पाकर चोरों ने बलाकगुप्त और उसके नौकर को एक गुफा में बन्दी बनाया।

बलाकगुप्त नाहक खतरे में फँस गया था। बचने का कोई उपाय न देख वह परेशान था। तभी गोपाल ने कहा– "मालिक, हम इस हीरे की अंगूठी की मदद से शायद बच सकते हैं।" इन शब्दों के साथ उसने एक अंगूठी अपने मालिक को दिखायी।

"यह अंगूठी तुम्हें कहाँ से मिली?" बलाकगुप्त ने आश्चर्य के साथ पूछा।

"एक चोर के हिस्से की थी। मैंने चालाकी से हड़प ली है।" गोपाल ने जवाब दिया।

वे दोनों गुफा में बात कर ही रहे थे कि तभी एक चोर उनके वास्ते खाना और पानी ले आया। उसके साथ जो दो चोर और आये थे, वे गुफा के बाहर पहरा दे रहे थे।

गुफा में आये हुए चोर को देख उसकी बनावटी तारीफ़ करते हुए गोपाल ने कहा–"मालिक, देखा है न? जवान हो तो ऐसे हो! वाह क्या बताऊँ? इसकी ऊँची क़द, चौड़ी छाती, रोबदार मूँछें! उफ़? पहलवान जैसे हैं? पहलवान!"
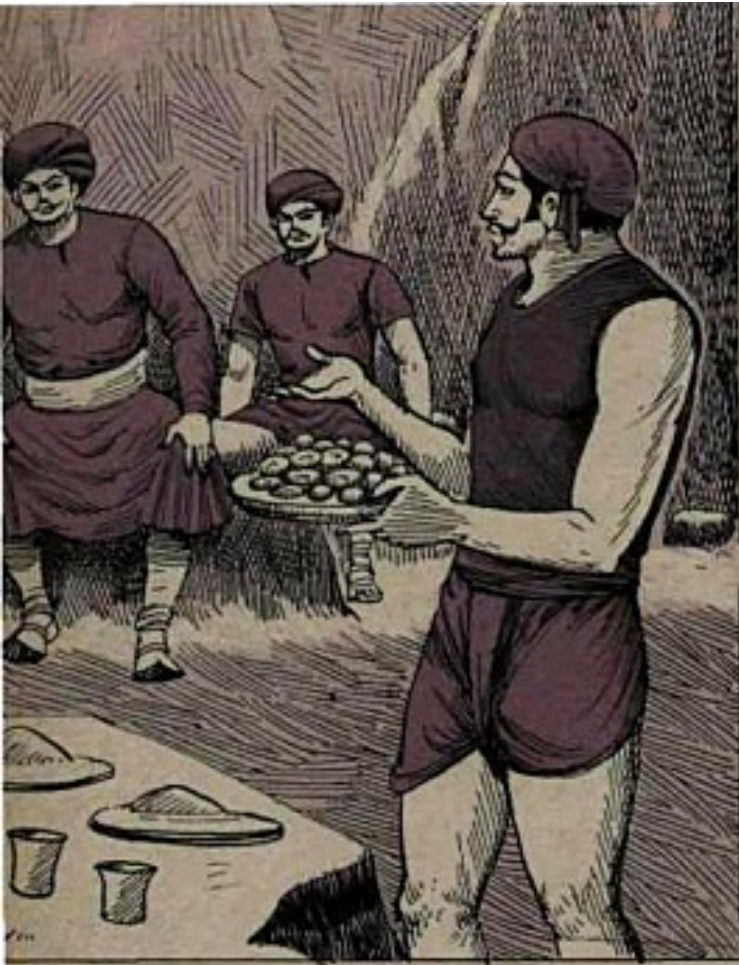
गोपाल की बातें सुनकर चोर फूल उठा। अपनी मूँछों पर ताव देते हुए बोला—"तुम दोनों जल्दी खाना खा लो! मुझे बहुत दूर जाना है। आज रात को मेरी बहन की शादी होनेवाली है।"

"अरे, तुम्हारी बहन की शादी हो रही है? बड़ी अच्छी बात है! क्या हमारी तरफ़ से उसे एक छोटी से भेंट दोगे?" इन शब्दों के साथ बलाकगुप्त ने चोर के हाथ में हीरे की अंगूठी रख दी।

आखिर चोर भी मनुष्य ही है। बलाकगुप्त के द्वारा उसके हाथ में हीरे की अंगूठी के रखते ही उसका दिल पिघल गया। उस चोर का नाम जटाधर था। उसने बलाकगुप्त से कहा—"तुम लोगों का माल तो लुट गया है। कम से कम जान बचाने का कोई मार्ग हो तो सोच लो। कल सवेरे जब मैं लौट आऊँगा, तब मुझ से जो कुछ होगा, मदद करने की कोशिश करूँगा।"

उस रात को बलाकगुप्त और गोपाल की आँखों में नींद न थी। रात भर जागते रह गये।

दूसरे दिन दुपहर को जटाधर भोजन के साथ कुछ मिठाइयाँ भी ले आया और बोला—"तुम लोगों ने जो भेंट दी, उसे देख मेरी बहन बहुत खुश हुई। उसी ने तुम्हारे वास्ते ये मिठाइयाँ भेज दी हैं, क्या तुमने भाग जाने का कोई उपाय सोच लिया है?"

"तुम गुफा का द्वार खोल दो और गुफा के बाहर दो घोड़े तैयार रखो तो हम भाग जायेंगे।" बलाकगुप्त ने कहा।

"यह मुझ से संभव न होगा।" जटाधर ने उत्तर दिया।

"क्या तुम्हारा सरदार जुआ आदि खेलने का शौक़ रखता है?" बलाकगुप्त ने फिर पूछा।

"जुआ खेलना तो मेरा सरदार नहीं जानता, मगर शतरंज के पीछे तो जान देता है। शतरंज में दाँव लगाकर खेलता है। कई दफ़े मैंने उसे शतरंज में हराकर पैसे जीत लिये हैं।" जटाधर ने कहा।

"क्या तुम अपने सरदार को एक बार हमारे पास भेज सकते हो? उससे कह दो कि हम शतरंज खेलना अच्छी तरह से जानते हैं।" बलाकगुप्त ने जटाधर से कहा।

न मालूम जटाधर ने अपने सरदार से क्या कहा, पर वह क़ैदियोंवाली गुफा के पास आ पहुँचा।

"क्या तुम सचमुच हम को कालीमाता की बलि चढ़ाने जा रहे हो?" बलाकगुप्त ने पूछा।

"क्या तुम समझते हो, मैंने मज़ाक किया है?" सरदार ने जवाब दिया।

"ज़रा सोच लो! मैं भी माता का भक्त हूँ। यही नहीं, मैं कालीमाता से वरदान भी प्राप्त कर चुका हूँ।" बलाकगुप्त ने समझाया।

"मैं यक़ीन नहीं कर सकता।" चोरों के सरदार ने स्पष्ठ शब्दों में कहा।

"तुम यक़ीन न करो! मैं साबित करके दिखाऊँगा। तुम मेरी आँखों पर पट्टी बाँध दो। एक थैली में तुम अपनी पसंद के छे सिक्के डाल दो। उनमें से एक सिक्का अपनी मुट्ठी में एक मिनट तक बंद करके रख लो। इस बीच कालीमाता का ध्यान करो, तब उसे फिर थैली में डाल दो। इसके बाद वह थैली मेरे हाथ दो। मैं थैली में से वह सिक्का निकाल कर दूँगा जिसे तुमने मुट्ठी में बंद कर रखा था, समझें!" बलाकगुप्त ने कहा।
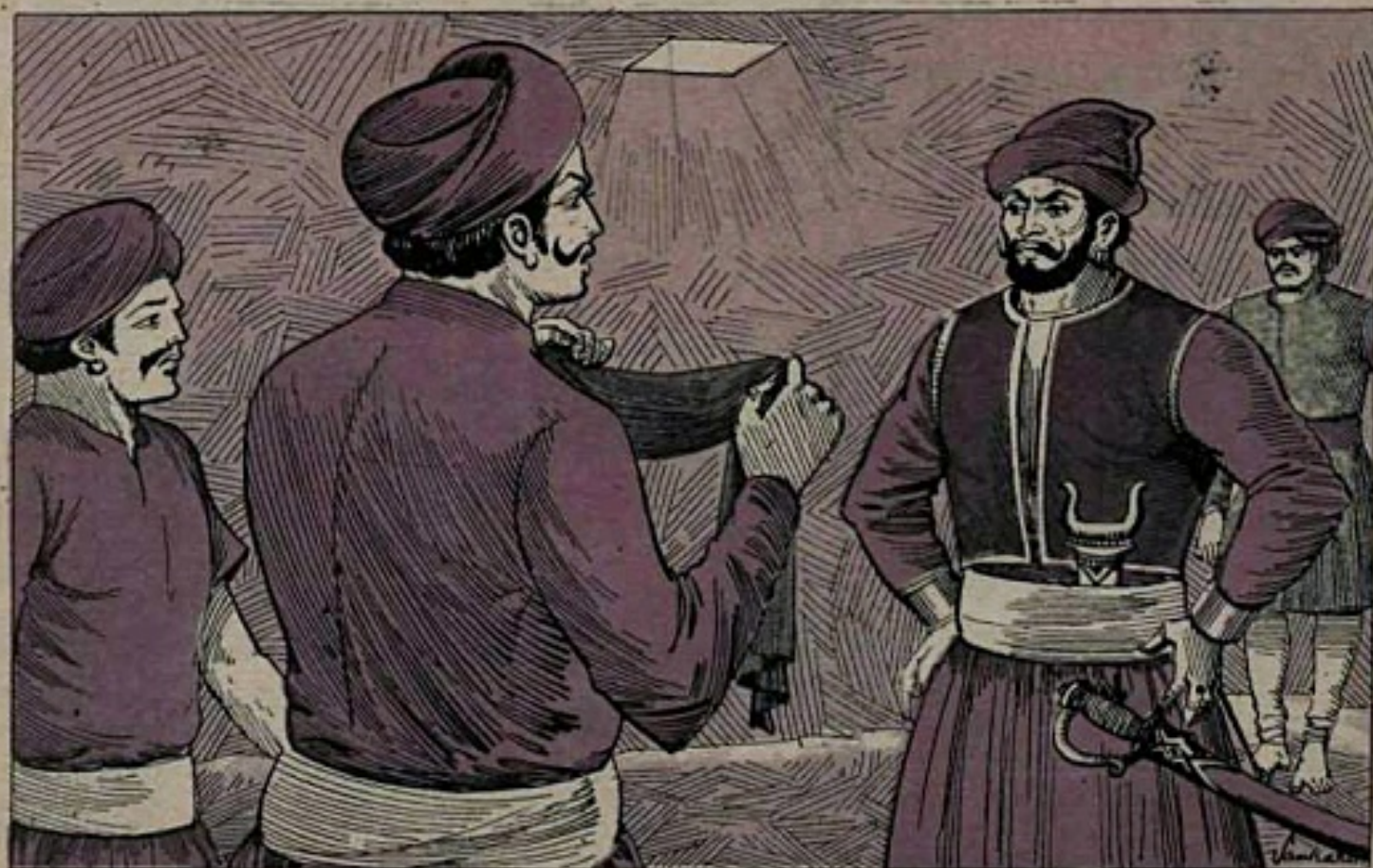
बलाकगुप्त की बातों पर सरदार को विश्वास न हुआ। मगर बलाकगुप्त को झूठा साबित करने के ख़्याल से सरदार ने उसकी आँखों पर पट्टी बाँध दी। एक थैली में छे सिक्के डाल दिये। उसमें से एक सिक्का निकाल कर अपनी मुट्ठी में बंद किया। एक मिनट तक कालीमाता का ध्यान करने के बाद उस सिक्के को फिर थैली में डाल दिया। तब वह थैली बलाकगुप्त के हाथ में दे दी। बलाकगुप्त ने थैली में हाथ डालकर टटोला। एक सिक्का बाहर निकालकर पूछा–"यही सिक्का तुमने अपनी मुट्ठी में बंद कर लिया था?"

चोरों का सरदार अवाक रह गया। फिर भी उसने इसी प्रकार तीन बार बलाकगुप्त की परीक्षा ली। तीनों बार बलाकगुप्त ने सही सिक्का बाहर निकाला।

तब चोरों का सरदार बलाकगुप्त के पैरों पर गिर पड़ा और बोला–"सरकार, मुझे माफ़ कर दो। तुम सचमुच कालीमाता के भक्त हो। तुमको कालीमाता का वरदान प्राप्त हुआ है।" इसके बाद सरदार ने बलाकगुप्त से माफ़ी माँग ली। उसे अपना माल तो लौटाया ही, साथ ही कई क़ीमती उपहार देकर भेज दिया।

जब बलाकगुप्त और उसका नौकर गोपाल अपने देश को लौट रहे थे, तब रास्ते में गोपाल ने पूछा–"मालिक, आपने कभी मुझ से नहीं बताया कि आपको कालीमाता का वरदान प्राप्त है?"

बलाकगुप्त ने हँसकर उत्तर दिया–"पगले, मैंने सिर्फ़ जादू किया था। सर्दी के इन दिनों में कोई भी आदमी एक मिनट तक एक सिक्के को अपनी मुट्ठी में बंद रखता है तो वह गरम हो जाता है। उसे बाक़ी सिक्कों में मिला देने पर बाक़ी सिक्के तो ठण्ड़े रहेंगे। केवल वही एक सिक्का गरम होगा।"

"वाह, चाहे जो हो, इस जादू ने हमारी जान की रक्षा की।" गोपाल ने ख़ुशी में आकर कहा।

लाजवाब

एक आदमी के पास एक शिकारी कुत्ता था। वह कुत्ता एक दिन गली में खड़ा था और रास्ते जानेवाले पर झपट पड़ा। उस व्यक्ति के हाथ में कुदाल थी। कुत्ते से बचने के लिए उसने कुत्ते के सर पर कुदाल भोंक दी। कुत्ता तो चोट खाकर नहीं मरा, पर घाव होने के कारण बहुत-सा खून बह गया।

कुत्ते के मालिक ने मुखिये के पास जाकर फ़रियाद की। मुखिये ने कुत्ते को मारनेवाले व्यक्ति को बुला भेजा और पूछा–"तुमने इस आदमी के कुत्ते को क्यों मारा?"

उसने जवाब दिया–"कुत्ता मुझे काटने को झपट पड़ा तो बचने के लिए मैंने उस पर कुदाल चलायी।"

कुत्ते का मालिक बीच में बोल पड़ा–"तुमको मारना ही था तो कुदाल की नोक से क्यों मारा? दूसरे शिरे से मार सकते थे न?" "साहब, क्या बताऊँ, तुम्हारे कुत्ते ने मुझे पूँछ से काटने की कोशिश न की, मुँह से काटने का प्रयत्न क्यों किया?" उस आदमी ने जवाब दिया।

इस पर मुखिये के साथ सब लोग हँस पड़े।

असली और नकली

एक गाँव में नीलकंठ और मुकुंद नामक दो आदमी थे। दोनों अड़ोस-पड़ोस के निवासी थे। मुकुंद शांत स्वभाव का था, मगर नीलकंठ ईर्ष्यालु था।

दोनों के घर विवाह के योग्य कन्याएँ थीं। पर मुकुंद की कन्या की शादी जल्दी तै हो गयी। वर पक्षवालों ने दहेज को लेकर कोई बखेड़ा खड़ा नहीं किया। बल्कि यही कहा कि मुकुंद खुशी से जो भी देगा, मान लेंगे।

इसके कुछ दिन बाद नीलकंठ की कन्या का रिश्ता भी तै हो गया। मगर वर पक्षवालों ने शर्त रखी कि दुलहिन को हीरे के कर्णफूल बना कर दे।

नीलकंठ को वह रिश्ता बड़ा अच्छा लगा, इसलिए उसने हीरे के कर्णफूल के साथ कन्यादान करने को मान लिया। लेकिन असली हीरे के कर्णफूल खरीदने की क्षमता उसमें न थी। इसलिए वह नकली हीरे के कर्णफूल खरीद लाया और इस बात को गुप्त रखने की अपनी पत्नी को चेतावनी दी।

नीलकंठ को इस बात की बड़ी ईर्ष्या हुई कि मुकुंद बिना कौड़ी खर्च किये अपनी कन्या का विवाह कर रहा है। इसलिए वह सीधे मुकुंद के समधी के गाँव पहुँचा और उसे उकसाया—"भाई साहब, मैं मुकुंद का पड़ोसी हूँ। हम दोनों अपनी अपनी कन्याओं का विवाह एक ही साथ करने जा रहे हैं। मैं अपनी कन्या को हीरे के कर्णफूल दे रहा हूँ। अगर तुम पहले ही माँग करते तो मुकुंद भी अपनी कन्या को हीरे के कर्णफूल बनवाकर दे सकता था।"

नीलकंठ की बात सुनकर मुकुंद के समधी ने कहला भेजा कि विवाह के

रामकुमार सिन्हा

दिन तक कन्या के लिए हीरे के कर्णफूल बनवाकर रखे ।

यह खबर सुनते ही मुकुंद का दिल बैठ गया । असली हीरे के कर्णफूल खरीदने की ताक़त उसे न थी । इसलिए उसने भी नकली हीरे के कर्णफूल खरीदा ।

इस बीच नीलकंठ की पत्नी ने अपने भाई के नाम पत्र लिखकर भेजा । कन्या की शादी तै हो गयी है । वरपक्षवालों ने हीरे के कर्णफूल खरीदने की माँग की । मगर मेरे पति ने नकली हीरे के कर्णफूल खरीदकर रखे हैं, यह बात शादी के दिन प्रकट हो जायगी तो हमारी बदनामी हो जायगी । इस पर नीलकंठ के साले ने असली हीरे के कर्णफूल बनवाकर भेजा । पर नीलकंठ की पत्नी ने यह बात अपने पति से गुप्त रखी और नकली हीरे के कर्णफूल को छिपा दिया । क्योंकि नीलकंठ और उसके साले के बीच बोली बंद थी । असली बात मालूम होने पर शायद वह बिगड़ सकता था ।

नीलकंठ को जब मालूम हुआ कि उसकी चाल के कारण मुकुंद ने भी हीरे के कर्णफूल खरीदे हैं, तो उसने सोचा कि वे असली कर्णफूल होंगे और उन्हें किसी न किसी तरह हड़पना होगा । वह अपने घर के कर्णफूल को पत्नी की नजर बचाकर मुकुंद के घर ले गया और बोला—" भाई, मैंने सुना है कि तुमने हीरे के कर्णफूल खरीदे हैं । मैं भी अपनी कन्या के लिए

खरीदना चाहता हूँ। जरा दिखाओ तो सही!"

मुकुंद ने नकली हीरे के कर्णफूल लाकर नीलकंठ को दिखाया। उन्हें देखने का अभिनय करते नीलकंठ ने मुकुंद से पानी माँगा। मुकुंद पानी लाने अन्दर चला गया। इस बीच नीलकंठ ने कर्णफूल बदल दिये, पानी पीने के बाद घर चला आया। बेचारा वह यह न जानता था कि वह जो कर्णफूल मुकुंद के घर से लाया है, वे नकली हैं और वह जो कर्णफूल मुकुंद के हाथ दे आया है, वे असली हीरे के हैं।

विवाह के दिन नीलकंठ का समधी अपने साथ सुनार को ले आया और दुलहिन के लिए खरीदे गये कर्णफूलों की जाँच करायी। सुनार ने जाँच करके बताया कि ये तो नकली हीरे के कर्णफूल हैं।

नीलकंठ ने घबराकर कहा—"मुकुंद ने जैसे हीरे के कर्णफूल खरीदे हैं, मैंने भी उसी क़िस्म के खरीदे हैं। चाहे तो उनकी भी जाँचकर देखिये।" मुकुंद के घर के हीरे के कर्णफूलों की जाँच करके सुनार ने उन्हें असली कर्णफूल बताया।

नीलकंठ के समधी को बड़ा गुस्सा आया। वह वर को साथ ले जाने को हुआ। तभी मुकुंद ने आकर उसे समझाया—"आप जल्दबाजी न कीजियेगा। मैंने सचमुच नकली हीरे के कर्णफूल खरीदे थे। भूल से दोनों बदल गये होंगे। ये असली हीरे के कर्णफूल नीलकंठ के ही हैं।" नीलकंठ का समधी शांत हुआ और शादी संपन्न हुई।

मुकुंद के समधी ने कोई झगड़ा नहीं किया। मुकुंद ने जब कहा कि आपने हीरे के कर्णफूल खरीदने को कहा तो मैंने असली हीरे के कर्णफूल खरीदने की क्षमता न होने के कारण नकली हीरे के खरीदे हैं, तो वे संतुष्ट हो गये।

दोनों कन्याओं की शादियाँ ठाठ से संपन्न हो गयीं।

उस दिन से नीलकंठ को मुकुंद के प्रति कभी ईर्ष्या न हुई।
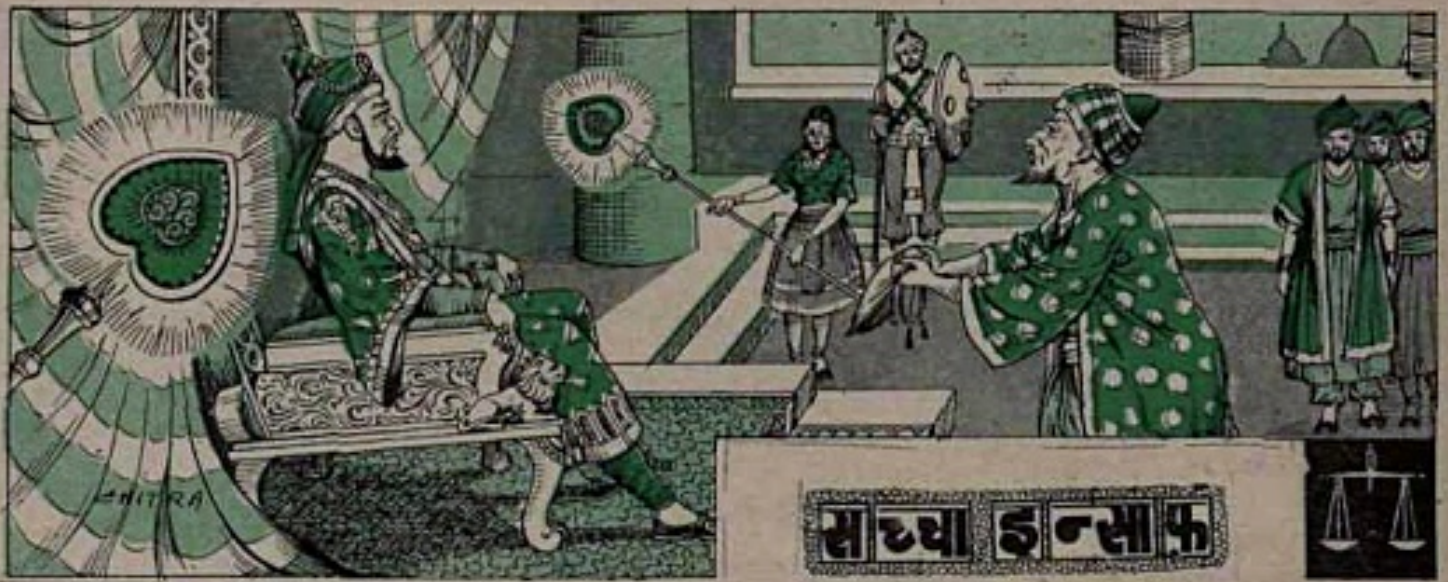
पुराने ज़माने की बात है। ईरान देश पर एक सुलतान राज्य करता था। वह बड़ा ही इन्साफ़ पसंद था। अगर उसके राज्य में गरीब से गरीब आदमी के प्रति भी कोई अत्याचार या अन्याय होता, तो उसके साथ न्याय करके तब वह सोता था।

एक बार सुलतान के दरबार में एक सौदागर आया। उस के हाथ में एक थैली थी। सुलतान ने उससे पूछा– "कहो, तुम्हारे साथ कैसा अन्याय हुआ है? साफ़ साफ़ बतला दो।"

"हुज़ूर! मैं एक सौदागर हूँ। आप के राज्य में मेरे साथ बड़ा अन्याय हो गया है।" सौदागर ने जवाब दिया।

"कहो, मैं तुम्हारे साथ न्याय करने की कोशिश करूँगा।" सुलतान ने कहा।

सौदागर ने अपनी फ़रियाद सुनायी। "हुज़ूर! मैं जब व्यापार करने निकला, तब मैंने अपनी गाढ़ी कमाई की दो हज़ार अशर्फियां इस थैली में भर दीं। उस पर मुहर लगा कर मैं इस शहर के काजी के हाथ दे गया। मुझे डर था कि इतनी बड़ी रक़म साथ ले जाऊँ तो शायद रास्ते में चोर और डाकू उसे लूट ले। इसलिए मैं काजी के हाथ सौंपकर चला गाया। मगर लौटकर मैंने काजी से जब अपनी थैली ले ली और घर जाकर देखा तो उसमें सोने की अशर्फ़ियों के बदले, तांबे के सिक्के भरे थे।" सौदागर ने कहा।

"थैली लेते समय क्या तुमने उसे ठीक से नहीं देखा?" सुलतान ने सौदागर से पूछा।

"हुज़ूर! वह थैली मेरी ही थी। घर लौट कर जब मैंने मुहर खोलकर देखा। तभी मुझे पता चला कि मेरी अशर्फ़ियों के

विमला कुमारी

बदले उसमें तांबे के सिक्के रखे गये हैं।" सौदागर ने जवाब दिया।

"क्या तुमने पहले नहीं देखा कि थैली में कहीं छेद या फटन तो नहीं हैं?" सुलतान ने फिर पूछा।

"जी नहीं, हुज़ूर! मैंने थैली पर जो मुहर लगायी थी, वह ज्यों की त्यों थी। इसलिए मुझे उस वक़्त बिलकुल शक न हुआ कि उसमें भरी गयी अशर्फ़ियाँ हड़प ली गयी हैं।" सौदागर ने उत्तर दिया।

सुलतान थोड़ी देर तक सोचता रहा, तब बोला–"अच्छी बात है! तुम अपनी थैली यहीं छोड़ जाओ। तुम्हारी बात सच है तो जरूर तुम्हारे प्रति न्याय होगा। मगर याद रखो, अगर तुमने झूठ कह दिया हो तो तुम्हारी जान की ख़ैर नहीं।"

सौदागर संतुष्ट हो कर चला गया। सुलतान घर जाकर सौदागर की फ़रियाद के बारे में सोचता रहा, पर उसकी समझ में नहीं आया कि बिना मुहर तोड़े थैली की अशर्फ़ियाँ कैसे गायब हो गयीं?

सोचते-सोचते सुलतान के दिमाग में अचानक इस सवाल का जवाब सूझा। तुरंत सुलतान दरबार में गया। अपनी गद्दी पर बिछायी गयी क़ीमती कालीन को जहाँ-तहाँ फाड़कर सुलतान घोड़े पर सवार हो चला आया।

दूसरे दिन सवेरे एक नौकर दरबार वाले महल में झाड़ू देने आ पहुँचा। उसने
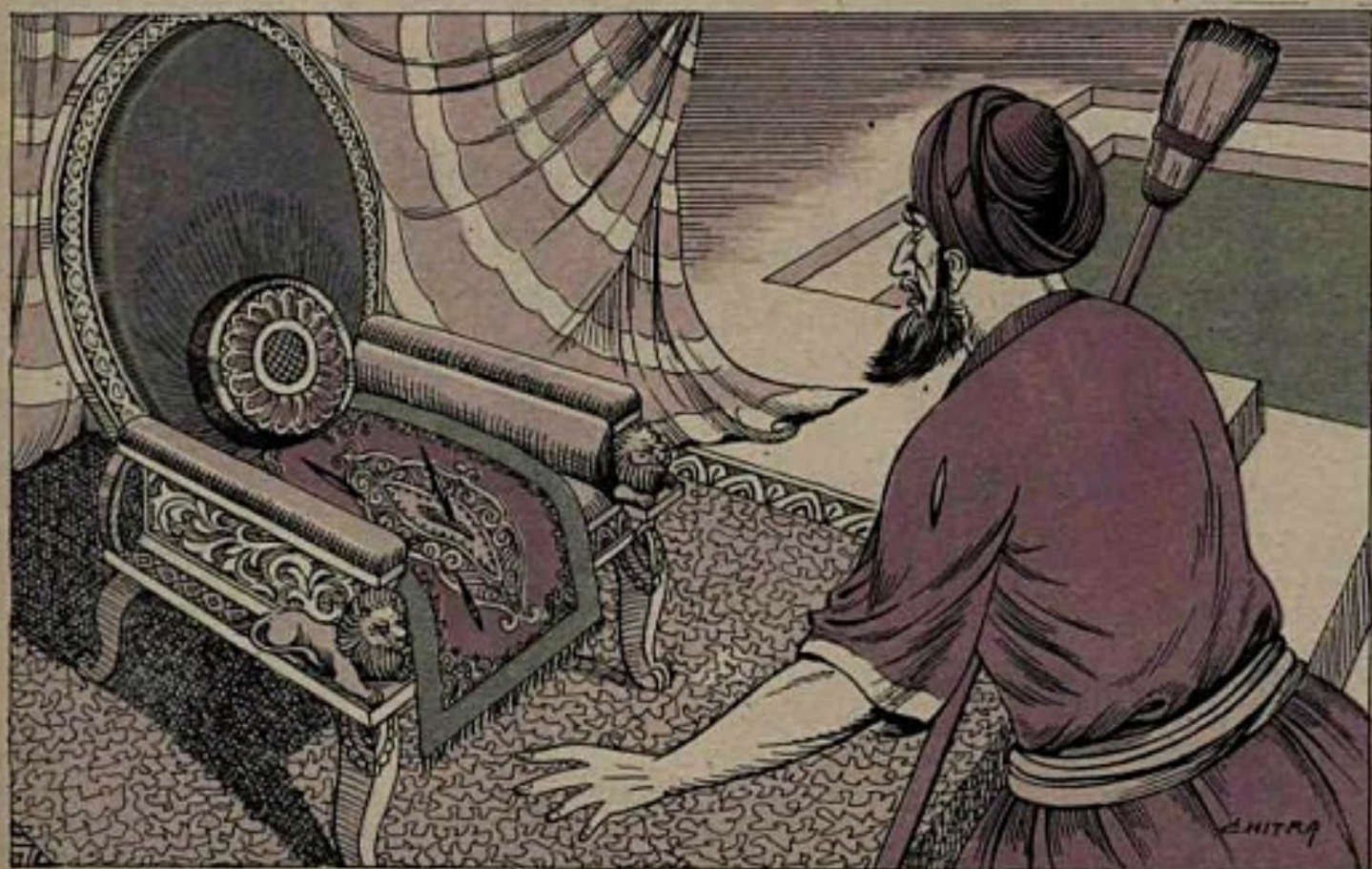
देखा कि गद्दी पर बिछायी गयी कालीन फटी हुई है। वह घबरा गया और राजमहल के सरदार को बुला लाकर उसे दिखाया।

सरदार ने नौकर से कहा–"तुम डरो मत! इसे ठीक किया जा सकता है। इस शहर में महम्मद नामक एक होशियार दर्जी है। उसे बुला लाओ। वह इस कालीन की इस खूबी के साथ मरम्मत करेगा कि पता तक न चलेगा कि कभी यह फट भी गयी है। तुम जल्द उसे बुला लाओ। बाक़ी सारा इंतज़ाम मैं कर लूंगा।"

नौकर सीधे महम्मद के घर पहुँचा। उसे सारी बातें समझाकर बोला–"तुमको अपनी सारी होशियारी दिखानी होगी।"

"घबराओ नहीं, दो अशर्फ़ियाँ दोगे तो मैं ऐसी मरम्मत करूँगा कि किसी को पता तक न चलेगा।" दर्ज़ी ने कहा।

नौकर नें दो अशर्फ़ियाँ निकालकर दर्जी के हाथ धर दीं और उसे साथ लेकर दरबार के महल में आया। महम्मद ने इस तरह मरम्मत की कि नौकर और सरदार चकित रह गये। नौकर की जान में जान आ गयी।

सूरज डूबने को था। सुलतान शाम को शिकार से लौटा। सीधे दरबार में गया। उसने देखा, गद्दी पर बिछायी गयी कालीन पहले जैसी थी। उस में कहीं फटन दिखायी न दे रही थी।

झाड़ू देने वाले नौकर को बुलाकर पूछा–"यह कालीन तो फटी थी न?"

नौकर ने घबराये स्वर में जवाब दिया–"जी नहीं हुजूर! यह तो ठीक है।"

"अरे बदमाश! झूठ बोलते हो? मैंने ही इस कालीन को खुद फाड दिया था। सच बताओ, इसकी मरम्मत किसने की?" सुलतान ने क्रोध में आकर पूछा।

नौकर ने कांपते हुये महम्मद के द्वारा की गयी मरम्मत का समाचार सुनाया।

इसके बाद सुलतान ने महम्मद को बुला भेजा। उसे सौदागर की थैली दिखाते हुए पूछा–"तुमने कभी यह थैली देखी?"

महम्मद ने थैली को उलट-पलट कर देखा और कहा–"जी हुजूर! हमारे शहर के काजी ने मुझसे इसकी मरम्मत करायी है!"

सुलतान ने दर्जी को भेज दिया। काजी को बुलवा कर कहा–"काजी साहब, ऐसी बेईमानी का काम कराते तुम्हें शर्म न आयी? इस से तुम्हारी इज्जत तो धूल में मिल गयी और साथ ही मेरा यश और देश की इज्जत को भी तुमने मिट्टी में मिला दी है।"

"सरकार! मैं कभी ऐसे काम नहीं करता, मेरे दुश्मन ने आप से मेरी शिकायत की होगी।" काजी ने जवाब दिया।

"मुँह बंद करो, क़मबख्त! यह क्या? देखो तो!" इन शब्दों के साथ सुलतान ने वह थैली काजी के मुँह पर फेंक दी।

काजी ने अपनी गलती स्वीकार की और सुलतान से माफ़ी मांगी। मगर सुलतान ने काजी को माफ़ नहीं किया। उसे क़ैद में डाल दिया। दूसरे दिन सौदागर को बुलवा कर उसे दो हज़ार अशर्फ़ियों के साथ तीन हज़ार और अशर्फ़ियां मिलाकर दी और कहा–"एक बड़े ओहदे पर रहनेवाले दगाबाज़ को तुमने पकड़वा दिया। इसलिए हम तुमको यह इनाम दे रहे हैं।"

राजधर्म

एक जमाने में फ़ारस का सुलतान नौशेरवान न्याय के लिए बहुत ही मशहूर था। राजनीति में ही नहीं बल्कि न्याय के लिए भी वह सारे संसार में प्रसिद्ध था।

एक बार नौशेरवान सदल-बल शिकार खेलने एक जंगल में गया। एक जगह दुपहर को पड़ाव डाल दिया गया और भोजन बनाने की तैयारियाँ होने लगीं। रसोइये अपने साथ नमक ले जाना भूल गये थे। इसलिए वजीर ने एक सिपाही को बुलाकर पास के गाँव से नमक लाने का आदेश दिया।

यह बात सुनते ही सुलतान ने सिपाही से कहा–"हमें जितना नमक चाहिये, उसकी क़ीमत देकर नमक लाना।"

"हुजूर, क्या नमक का भी दाम देना है?" वजीर ने सुलतान से पूछा।

"ऐसी छोटी-मोटी बातों से ही दुनिया में निरंकुशता और जुल्म-जबर्दस्ती शुरू हो जाती हैं। हमारे बाद की पीढ़ी जनता को और सतायेगी। इस तरह यह बढ़ती ही जायगी।" नौशेरवान ने समझाया।

अच्छा सबक

एक गाँव में श्रीपति और जगपति नामक दो मित्र थे, श्रीपति धनी था और जगपति गरीब। फिर भी उन दोनों के बीच गाढ़ी मित्रता थी।

एक दिन दोनों मित्र कहीं जा रहे थे। रास्ते में एक गाँव के बाहर कुएँ के पास पानी भरते दो कन्यायें दिखायी दीं। श्रपति को प्यास लगी थी। इसलिए जगपति को एक पेड़ की छाया में बिठाकर वह पानी पीने कुएँ की ओर चल पड़ा। वह कुएँ के पास पहुँच गया था, तभी उसे उन युवतियों की बातचीत सुनायी दी।

लाल साड़ीवाली कन्या सफ़ेद साड़ीवाली कन्या से कह रही थी–"लक्ष्मी, सच बताओ, तुम कैसे पति चाहती हो?"

"रोहिणी! क्या बताऊँ? मेरी तो बड़ी-बड़ी कामनाएँ हैं। मुझे तो बहुत सारे गहने चाहिए, अच्छी अच्छी साड़ियाँ चाहिए। मेरे लिए एक बड़ा महल हो। खाने में कई तरकारियाँ और मिष्टान्न हों! मैं जो कुछ चाहती हूँ, क्या ये सब मिल जायेंगी?" लक्ष्मी कह रही थी।

रोहिणी ने गहरी साँस लेकर कहा–"मेरी वैसी कामनाएँ तो नहीं हैं, बहन! जो कुछ होगा, उसी से मैं संतुष्ट हो जाऊँगी! खाने के लिए रोटी-दाल मिल जाय तो बस! आखिर भूख मिटाने के लिए थोड़े से चने की दाल भी पर्याप्त है।"

ये बातें सुनने पर श्रीपति के दिमाग में एक विचार आया। ये दोनों कन्याएँ विवाह के योग्य हो गयी हैं। रोहिणी जैसी पत्नी उसे मिल जाय तो फ़िजूल खर्च न होगा। पर साथ ही उसके मन में यह दुर्बुद्धि भी पैदा हो गयी कि लक्ष्मी जैसी पत्नी मिल जाय तो निर्धन जगपति अपनी गृहस्थी कैसे संभाल लेगा, देखना है!

जयंत नारंग

यह विचार करके श्रीपति जगपति के पास लौट आया और बोला–"दोस्त, लगता है कि कुएँ के पास खड़ी उन कन्याओं का अभी तक विवाह नहीं हुआ है। हम भी तो शादी करना चाहते हैं। इसलिए एक काम करेंगे, लाल साड़ीवाली कन्या के साथ मैं विवाह करूँगा, तुम सफ़ेद साड़ीवाली युवती से शादी करो!"

जगपति ने मान लिया। तब दोनों मित्रों ने उन कन्याओं के साथ गाँव में जाकर विवाह के प्रयत्न किये। वे अपने प्रयत्न में सफल भी हुए। बड़ी बड़ी कामनाएँ रखने वाली लक्ष्मी ने जगपति के साथ शादी करके उसकी झोंपड़ी में क़दम रखा। रोहिणी श्रीपति के साथ विवाह करके उसके महल में आ पहुँची।

रोहिणी ने श्रीपति के घर में क़दम रखते ही पूछा–"इतने बड़े महल में एक भी नौकर दिखाई नहीं देता?"

श्रीपति ने हँसकर जवाब दिया–"नौकर किसलिए? बेकार पैसे खर्च करने हैं। हम दोनों अपना अपना काम कर लेंगे।"

रोहिणी ने रसोई बनाने की तैयारी करते हुए पूछा–"कैसी तरकारियाँ बनाऊँ? पक्वान्न क्या क्या बनाऊँ?"

"तरकारियाँ किसलिए? रोटी-दाल से अपना पेट भर लेंगे। पक्वान्न ही क्यों? थोड़ी चने की दाल लेते आऊँगा!" श्रीपति ने जवाब दिया।

उस दिन रात को रोहिणी ने अपने पति से पूछा–"हमारे पास इतनी सारी संपत्ति है! मेरे लिए अच्छे अच्छे गहने और बढ़िया साड़ियाँ ला दीजिये न?"

"संपत्ति के होने मात्र से फिजूल खर्ची नहीं करनी है। गहने और क़ीमती साड़ियाँ किसलिए? जो कुछ है, उसी से संतुष्ट रहो।" श्रीपति ने समझाया।

"यह तो अव्वल दर्जे का कंजूस है!" रोहिणी ने मन ही मन पति को कोसा।

दूसरे दिन सवेरे जब श्रीपति की आँख खुली तो देखा, चार आदमी घर में खड़े हैं।

"तुम लोग कौन हों? यहाँ पर क्या करते हों?" श्रीपति ने पूछा।

"हम तो नौकर हैं, सरकार! बहूजी ने आज से हमको काम पर लगा रखा है।" नौकरों ने विनयपूर्वक उत्तर दिया।

"क्या कहा! एक साथ चार नौकर? चले जाओ! मैं तुम चारों का खर्च कहाँ उठा सकता हूँ?" श्रीपति गरज पड़ा।

इतने में रोहिणी ने पहुँचकर अपने पति से शांति के साथ कहा–"आप शांत हो जाइये! चार क्या, चालीस नौकरों को तनख्वाह देने की हमारी ताक़त है।" फिर नौकरों से बोली–"तुम लोग जाओ, अपना अपना काम देख लो।"

श्रीपति जब खाने बैठा, तब एक एक रसोइये ने आकर चार तरकारियाँ और पक्वान्न परोसा।

"मेरा घर डूबता जा रहा है!" श्रीपति चिल्ला पड़ा।

"उफ़! चुप रहिये! नौकर सुनेंगे, तो हँस पड़ेंगे। हम अच्छी तरह से खायेंगे और दूसरों को भी खिलायेंगे! वरना यह सारी संपत्ति किस काम की?" रोहिणी ने समझाया।

चार दिन बाद रोहिणी तरह-तरह के कपड़े व गहने खरीद लायी और अपने पति को दिखाया। उन्हें देख रोते हुए श्रीपति बोला-"बाप रे, बाप! मैं लुट गया। अब मैं जल्द भिखारी बन जाऊँगा।"

रोहिणी अपने पति के आँसू पोंछते हुए बोली-"रोइये मत, शांत हो जाइये।"

"न रोऊँ तो करूँगा क्या? उस दिन कुएँ के पास तुम्हारी बातें सुनकर मैं धोखा खा गया।" श्रीपति ने कहा।

रोहिणी आश्चर्य में आकर बोली-"ओह, यह बात है? उस दिन मेरी बातें सुनकर आपने मुझ से शादी की? फिर भी मैं झूठाखोर नहीं हूँ। अगर हमारे पास संपत्ति न होती तो मैं ये सब नहीं करती। जब हमारे पास काफ़ी धन है तो हम कंगालों की तरह क्यों जिये?"

श्रीपति ने सोचा कि मेरी यह हालत है, तो बेचारा जगपति कैसी यातनाएँ भोगता होगा? इस विचार के आते ही वह सीधे जगपति के घर गया। उसने देखा, पति-पत्नी दोनों खाना खा रहे हैं। श्रीपति को

देखते ही जगपति ने उसका स्वागत करते हुए कहा–"आओ दोस्त! आओ।"

श्रीपति उन दोनों के सामने बैठ गया। पर मन में सोचता रहा, बेचारा यह इतनी सारी कामनाएँ रखनेवाली लक्ष्मी के साथ अपनी गृहस्थी कैसे चला रहा है! मगर उसने जब जगपति का चेहरा देखा तब उसका विचार गलत मालूम हुआ। उसके चेहरे पर उत्साह उमड़ रहा था। वे सिर्फ़ रोटी-दाल खा रहे थे। लक्ष्मी के चेहरे पर उसे कोई असंतोष दिखाई न दिया। झोंपड़ी भी करीने से सजाई गयी थी और साफ़ सुथरी थी। खाना खा चुकने के बाद जगपति ने श्रीपति से कहा–"दोस्त, मैं रोज़ तुमसे मिलना चाहता था, पर फ़ुरसत नहीं मिली! कहो, तुम्हारी गृहस्थी कैसी है?"

"मेरी गृहस्थी की बात क्या है! पर यह बताओ कि तुमको फ़ुरसत न मिलने का कारण क्या है?" श्रीपति ने पूछा।

"उधर देखो तो सही! पिछवाड़े को साफ़ करके हमने समतल बनाया। पौधे रोपे। जब इनमें तरकारी और फल लगने लगेंगे तब हमारे लिए काफ़ी आमदनी हो जायगी।" जगपति ने कहा।

"तुम्हारी पत्नी भी तुम्हारे साथ मिलकर काम करती है? क्या वह गहने और साड़ियाँ ख़रीद लाने के लिए तुमको तंग नहीं करती?" श्रीपति ने पूछा।

"भाई साहब! ऐसी कोई बात तो है नहीं।" जगपति ने बताया।

"तब तो उस दिन कुएँ के पास इन दो युवतियों के बीच जो बातचीत हुई, वह उल्टी हो गयी है?" श्रीपति ने कहा।

"उल्टी तो कुछ नहीं हुई भाई साहब! उस वक़्त मेरे मन में बहुत सारी कामनाएँ ज़रूर थीं। मगर अब मैंने सीखा, जो कुछ है, उसीसे संतुष्ट होना चाहिये।" लक्ष्मी ने कहा।

लक्ष्मी के विचार सुनने के बाद श्रीपति ने एक अच्छा सबक़ सीखा। वह यह कि संपत्ति कामनाओं को बढ़ाती है तो गरीबी उन्हें क़ाबू में रखती है।
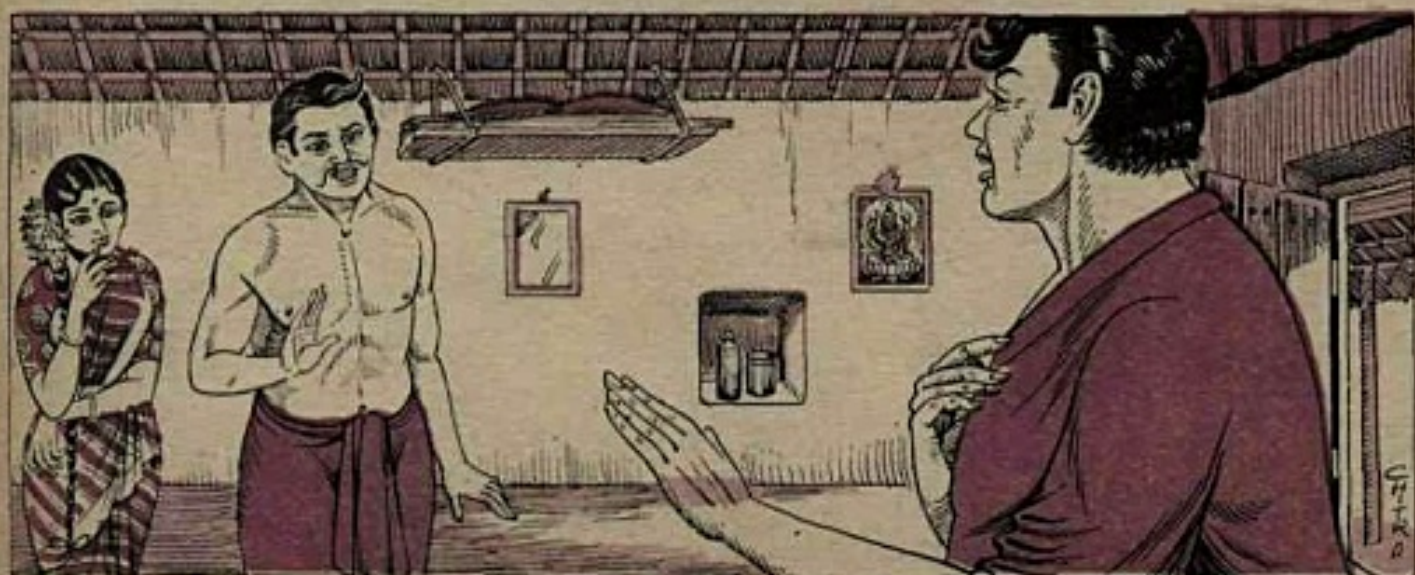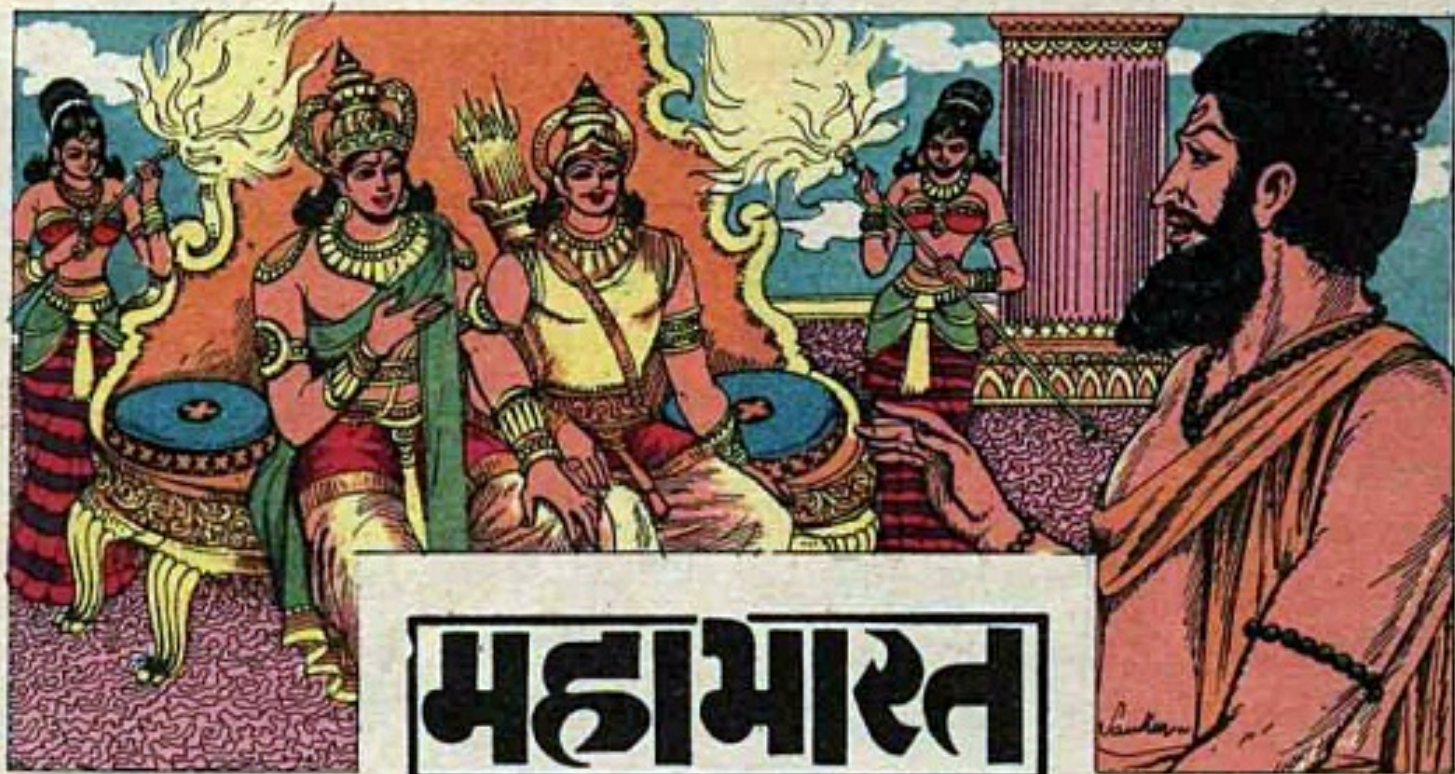
इन्द्र के पास जब अर्जुन बैठा हुआ था, तब रोमश नामक एक महर्षि तीनों लोकों का संचार करते स्वर्ग में पहुँचा। इन्द्र के सिंहासन पर इन्द्र के साथ अर्जुन को भी बैठे देख वह आश्चर्य में आया और मन में सोचने लगा–"अर्जुन ने न मालूम कैसी घोर तपस्या करके इन्द्र के सिंहासन पर बैठने की योग्यता प्राप्त कर ली है!"

उसके आश्चर्य से परिचित हो इन्द्र ने मुस्कुराते हुए कहा–"मुनिवर, यह अर्जुन साधारण मानव नहीं, पूर्व जन्म में यह नर नामक महर्षि है। नारायण नामक महर्षि के साथ रहकर इसने हजारों वर्षों तक बदरिकावन में तप किया है। नारायण महर्षि पूर्व जन्म में कपिल महामुनि था। वे ही नर-नारायण इस समय पृथ्वी का भार कम करने के लिए अर्जुन और कृष्ण के रूप में अवतरित हुए हैं। पाताल लोक में स्थित निवात और कवच देवताओं को सता रहे हैं। अर्जुन के द्वारा उनका विनाश कराना है। इसीलिए मैंने अर्जुन को यहाँ पर बुला भेजा है। तुम भूलोक में जाकर काम्यक वन में स्थित युधिष्ठिर से कह दो कि अर्जुन स्वर्ग में नृत्य और संगीत का अभ्यास करते सुखपूर्वक है।"

रोमश महामुनि इन्द्र का आदेश पाकर भूलोक के लिए रवाना हो गया।

व्यास महर्षि ने धृतराष्ट्र को बताया कि अर्जुन ने दिव्य अस्त्र प्राप्त किये हैं और वह इस वक़्त स्वर्ग में रहता है। यह समाचार

सुनते ही धृतराष्ट्र ने संजय को बुला कर कहा–"संजय, क्या तुमने सुना? अर्जुन ने स्वर्ग में जाकर दिव्य अस्त्र प्राप्त किये हैं। देखा है न, दुर्योधन की दुर्बुद्धि की वजह से हमें कैसा खतरा उत्पन्न हो गया है? बेचारी प्रजा न मालूम कैसी यातनाओं का शिकार होगी? मेरा दिल कहता है कि युधिष्ठिर और अर्जुन दोनों मिल कर तीनों लोकों को जीत सकते हैं। मेरे पुत्रों की मौत निश्चित है।" ये शब्द कहते वह चिंता में डूब गया।

"इसमें रत्ती भर भी असत्य नहीं है। तुम्हारे पुत्रों ने द्रौपदी को भरी सभा में खींच लाकर सब तरह से उसका अपमान किया है। इसलिए तुम्हारे पुत्रों पर पांडवों को क्रोध क्यों न आवेगा? वे इसका बदला लेंगे ही।" संजय ने कहा।

उधर धौम्य ने युधिष्ठिर को बताया कि अर्जुन के लौटने तक तीर्थयात्राएँ करें। युधिष्ठिर अपने भाई, द्रौपदी तथा ब्राह्मणवृंद को साथ ले तीर्थयात्रा करने निकलने ही जा रहे थे कि तभी रोमश महर्षि ने वहाँ पहुँच कर कहा–"मैं इन्द्र की सुधर्मा नामक सभा में गया था। मैं ने अपनी आँखों से देखा, इन्द्र के साथ सिंहासन पर तुम्हारा भाई अर्जुन भी बैठा हुआ था। मुझे तो बड़ा आश्चर्य हुआ। इन्द्र ने मुझे आप लोगों को अर्जुन के कुशल समाचार सुनाने का आदेश दिया है। मैं इसीलिए यहाँ आया हूँ। अर्जुन को इन्द्र ने अनेक दिव्य अस्त्र दिये हैं। फिलहाल वह चित्रसेन नामक गंधर्व के पास नृत्य और संगीत का अभ्यास कर रहा है। इन्द्र ने आपको तीर्थयात्राएँ करने की सलाह दी है। मैंने इसके पूर्व दो बार तीर्थयात्राएँ की हैं। फिर भी तीसरी बार आप लोगों के साथ चलूँगा।"

रोमश महर्षि के मुँह से ये बातें सुनकर युधिष्ठिर को बड़ी प्रसन्नता हुई। वे सोचने लगे–अर्जुन को जिस काम पर भेजा गया, वह सफल हो गया है। अब हम

निश्चित रह सकते हैं। तीर्थाटन करने की सलाह इन्द्र ने भी दी है। इसके बाद युधिष्ठिर जब तीर्थाटन पर निकलने लगे तब उन्होंने अपने दल के आधे लोगों को हस्तिनापुर तथा द्रुपद के नगरों में भेजा और कवच एवं आयुधधारी इन्द्रसेन इत्यादि कुछ लोगों को अपने साथ लिया।

पांडव तीर्थयात्राएँ करते गोमती तीर्थ, कन्या तीर्थ, गो तीर्थ, बाहुदा नदी तट, त्रिवेणी, गया क्षेत्र आदि स्थानों में गये और वहाँ के तीर्थों का सेवन किया। अगस्त्य के आश्रम में जाकर अगस्त्य की कहानी सुनी।

प्राचीन काल में मणिमंत नामक नगर में इल्वल तथा वातापी नामक दो भाई थे। वे ब्राह्मणों का आतिथ्य करते और तब उन्हें मार डालते। वातापी अपनी महिमा के बल पर बकरी में बदल जाता और इल्वल उसका मांस पका कर ब्राह्मणों को खिलाता, तब पुकारता–"वातापी, चले आओ।" वातापी उन ब्राह्मणों का पेट चीर कर बाहर आ जाता, इस तरह ब्राह्मण अतिथि मर जाता। यह क्रम अनेक दिनों से चलता रहा।

इस बीच अगस्त्य महामुनि ने विदर्भ की राजकुमारी लोपामुद्रा के साथ विवाह किया और उसकी इच्छा पर धन लाने चल पड़ा। यों तो अगस्त्य तीन राजाओं के पास गया, पर किसी के पास इतना धन न था कि उसे दे सके। पर अगस्त्य ने सुना कि मणिमंत में रहने वाले वातापी और इल्वल के पास काफ़ी धन है और वह वहाँ चला गया।
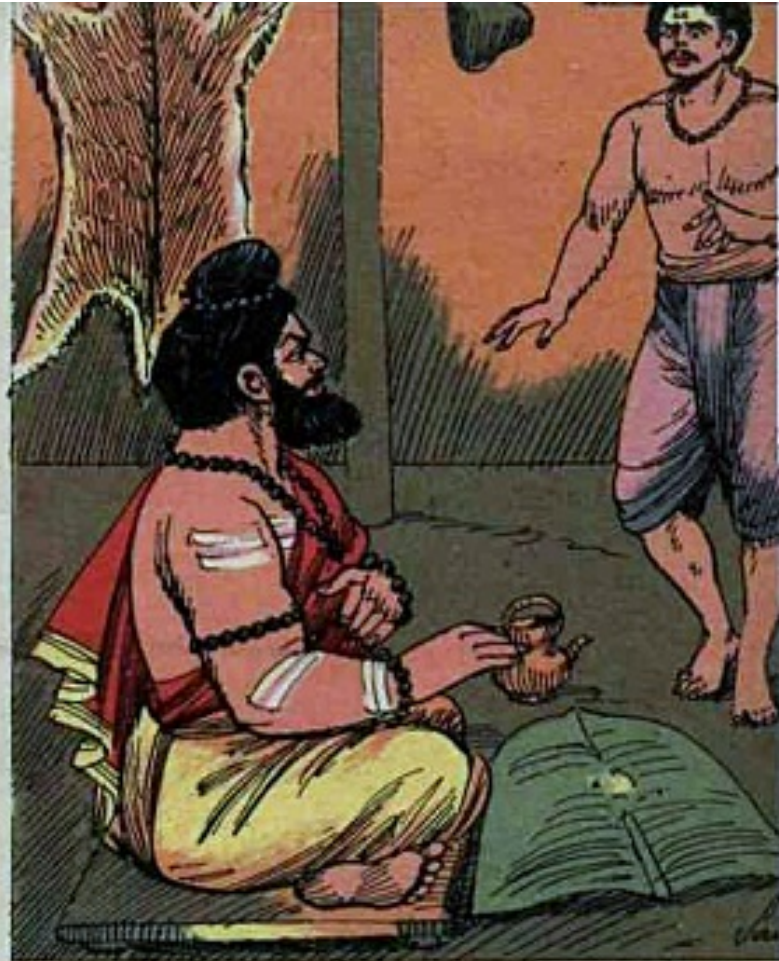
अगस्त्य को देखते ही इल्वल ने अपनी आदत के अनुसार वातापी को बकरी के रूप में बदल दिया और उस बकरी का मांस अगस्त्य को खिलाया। अगस्त्य ने मांस खाकर डकार लिया। इल्वल ने पुकारा–"वातापी, चले आओ।"

"वातापी कहाँ? वह कभी का हज़म हो चुका है।" अगस्त्य ने जवाब दिया।

इल्वल का चेहरा सफ़ेद पड़ गया। उसने हार मानकर अगस्त्य तथा उसके साथ आये हुए तीन राजाओं को अपार धन देकर भिजवा दिया।

अगस्त्य के बारे में युधिष्ठिर ने और अनेक कथाएँ सुनीं :

एक बार विन्ध्याचल ने सूर्य से पूछा– "तुम मेरु पर्वत की परिक्रमा क्यों करते हो? उससे भी बड़ा मैं हूँ, मेरी परिक्रमा करो।"

"मैं जानबूझकर मेरु की परिक्रमा नहीं करता। मेरे जिस मार्ग पर चलने का विधान हुआ है, मैं उसी मार्ग में घूमता हूँ।" सूर्य ने जवाब दिया।

इस पर नाराज हो विन्ध्य पर्वत सूर्य और चन्द्रमा के मार्ग तथा ग्रहों के मार्गों को रोकते हुए ऊपर बढ़ता गया। सारा जगत अंधकारमय हो गया। तब देवताओं ने अगस्त्य के पास जाकर निवेदन किया– "हे मुनिवर, आपके शिष्य विन्ध्य ने जगत को अस्त-व्यस्त कर दिया है। उसे नियंत्रण में रखिये।"

तब अगस्त्य लोपामुद्रा के साथ विन्ध्य पर्वत के पास गया और बोला–"बेटा, मैं जरूरी कार्य पर दक्षिण जा रहा हूँ। मुझे रास्ता दे दो।" विन्ध्य ने अगस्त्य को साष्टांग प्रणाम किया और मार्ग दे दिया।

"मेरे लौटने तक तुम ऐसे ही रहो।" अगस्त्य मुनि ने कहा। इसके बाद वह महामुनि दक्षिण से लौटा नहीं और विन्ध्य का सर भी झुका हुआ झुका-सा ही रह गया।

कालकेय नामक राक्षस समुद्र के भीतर निवास करते हुए रात के समय पृथ्वी पर आते और ब्राह्मणों को सताने लगे। समुद्र में घुस कर कालकेयों को मारना देवताओं के लिए भी संभव न हुआ, इसलिए वे अगस्त्य की शरण में गये। इस पर उस मुनि ने समुद्र के सारे जल को एक घूंट में पी डाला, जिससे कालकेय प्रकट हो गये। देवताओं ने उन राक्षसों के साथ

युद्ध करके कई लोगों को मार डाला। पर कालकेय बचकर पाताल लोक में भाग गये। इस तरह जो समुद्र सूख गया था, वह भगीरथ के द्वारा गंगा को पृथ्वी पर लाने पर जलमय हो गया।

अगस्त्य के आश्रम से निकल कर पांडव अनेक तीर्थों का सेवन करते कौशिकी नदी के तट पर गये और वहाँ पर स्थित विश्वामित्र का आश्रम तथा उसके निकट के विभाण्डक के आश्रम को भी देखा। वहाँ पर पांडवों ने विभाण्डक के पुत्र ऋश्यश्रृंग की कहानी सुनी।

अंग देश पर शासन करनेवाला रोमपाद दशरथ का मित्र था। रोमपाद ने ब्राह्मणों के प्रति अन्याय किया। इसलिए वे सब उस राज्य को छोड़ कर भाग गये। इससे उसके राज्य में वर्षा नहीं हुई और अकाल पड़ गया। रोमपाद ने अपने मंत्रियों की सलाह पर वेश्याओं को भेज कर ऋश्यश्रृंग को आकृष्ट कराया और उसको अपने देश में बुलवा लाकर अपनी पुत्री शांता का विवाह उसके साथ किया। ऋश्यश्रृंग के क़दम रखते ही अंग देश में भारी वर्षा हो गयी।

पांडव इस तरह अनेक तीर्थों का सेवन करते महेन्द्र पर्वत के पास गये। वहाँ पर अकृतवर्ण ने युधिष्ठिर को परशुराम की कहानी सुनायी। हैहय वंश में उत्पन्न कार्तवीर्य परशुराम के पिता जमदग्नि के आश्रम में आया। वह आश्रम को ध्वंस करके उसके होम की गाय को पकड़ ले गया। परशुराम ने आश्रम में लौटते ही यह ख़बर सुनी। तब उसने कार्तवीर्य के साथ युद्ध करके उसको मार डाला। इसके बाद कार्तवीर्य के पुत्र ने जमदग्नि को अपने आश्रम में अकेले देख उसका कंठ काट डाला और चले गये। इस पर प्रतिशोध लेने के ख़्याल से परशुराम ने इक्कीस बार सारे संसार की परिक्रमा की और जो भी क्षत्रिय उसे दिखायी दिया, उसे मार डाला।

पांडव जब प्रभास तीर्थ पहुँचे, तब उन्हें देखने कृष्ण, प्रद्युम्न, सात्यकी, अनिरुद्ध इत्यादि यादव पहुँचे। यादवों ने पांडवों को इस बात की हिम्मत बंधायी कि युधिष्ठिर युद्ध में सब कौरवों का संहार करके राज्य प्राप्त करेंगे।

यादवों के द्वारका लौटने के बाद पांडव तीर्थाटन करने फिर से निकल पड़े। आखिर वे गंधमादन पर्वत पर पहुँचे और वहाँ वे अर्जुन की प्रतिक्षा करने लगे। वह एक पवित्र प्रदेश है और सभी पुण्य तीर्थों में श्रेष्ठ माना जाता है। वहाँ पर पांडवों ने नरकासुर की हड्डियों का ढेर देखा।

पांडव जब गंधमादन पर्वत तक पहुँच रहे थे, तभी भयंकर तूफ़ान उठा। उसकी धूल के छा जाने से सब ओर अंधकार फैल गया। तदनंतर बिजली की कौंध और कड़क के साथ मूसलधार वर्षा हुई। सब लोग अपनी अपनी रक्षा करने के लिए भाग गये। मगर द्रौपदी पैदल चलने की थकावट, वर्षा और सर्दी के मारे थर-थर कांपते बेहोश हो गयी। उसके पत्थरों पर गिरते देख नकुल ने थाम लिया और द्रौपदी को उस हालत में देख युधिष्ठिर, भीम और सहदेव थोड़ी देर के लिए स्तम्भित रह गये।

युधिष्ठिर द्रौपदी के सर को अपनी जांघ पर रखे बड़ी देर तक विलाप करने लगे। बाक़ी लोगों ने द्रौपदी के उपचार किये। आगे के रास्ता बड़ा बीहड़ था। इसलिए यात्रा चालू रखना मुश्किल मालूम होने लगा। इस पर भीम ने घटोत्कच का स्मरण किया। वह तुरंत अपने राक्षस-दल के साथ हाज़िर हुआ। घटोत्कच ने पांडव तथा द्रौपदी को उठाया। बाक़ी लोगों को अन्य राक्षसों ने अपने कंधों पर बिठाया। यात्रा बड़ी तेज़ी के साथ चली। आखिर वे लोग कैलास के समीप में वदरिकाश्रम के पास पहुँचे। वहाँ गंगा के तट पर सब लोग राक्षसों के कंधों पर से उतर पड़े।

गंगा में स्नान करने के बाद अपने निवास का प्रबंध किया। उस प्रदेश के मुनियों ने पांडवों का कंद-मूल व फलों के साथ आतिथ्य किया।

छे दिन बीत गये। एक दिन कहीं से विचित्र गंध आयी। उसी समय पांडवों के बीच एक पुष्प आ गिरा। वह एक हज़ार पंखुड़ियों वाला लाल कुमुद था। वह देखने में सुंदर था और साथ ही सुगंध फेंक रहा था। द्रौपदी ने उस फूल को उठाया और भीम से कहा–"मैं यह फूल युधिष्ठिर को देती हूँ। ऐसे ही और फूल ले जाकर हम काम्यक वन में रखेंगे। मेरे वास्ते क्या ये फूल लेते आयेंगे?"

भीम द्रौपदी की इच्छा की पूर्ति करने के विचार से धनुष और बाण लिये चल पड़ा। वह उस दिशा में आगे बढ़ा, जिस दिशा से वह सुमन आ गिरा था। रास्ते में कोयलों का कूजन, भौंरों का झंकार, झरनों की मरमर ध्वनि सुनते, द्रौपदी का स्मरण करते, भीम आगे बढ़ रहा था। मार्ग में रोड़ा बनने वाले पेड़ों को तोड़ते, लताओं को काटते, बीच-बीच में सिंहनाद करते भीम बहुत दूर निकल गया। एक जगह केले का एक बड़ा वन मिला। उन पौधों को हटाते, सिंहनाद करते जब भीम आगे बढ़ा, तब उस आवाज़ से डरकर जलपक्षियों का दल आसमान में उड़ा। भीम ने उन पक्षियों को देख समझ लिया कि उस दिशा में जल है और उसी दिशा में जाकर वह एक सरोवर के पास जा पहुँचा।

भीम ने उस सरोवर में स्नान किया। केले के वन से होकर जाते हुए फिर से सिंहनाद किया। उसी वन में रहने वाले हनुमान ने समझ लिया कि यह नाद भीम ने ही किया है। वह बहुत प्रसन्न हुआ और भीम के रास्ते को रोकते हुए लेट गया। उसने अपनी पूंछ उठा कर इस तरह ज़मीन से पटक दिया कि सारी दिशाएँ एक दम गूंज उठीं।

उस ध्वनि को सुनकर भीम हनुमान के निकट आ पहुँचा।

शिवपुराण

[७]

ब्रह्मा के द्वारा देवताओं को जब यह मालूम हुआ कि शिव और पार्वती के द्वारा उत्पन्न होने वाला पुत्र तारक का वध करेगा, तब वे बड़ी खुशी से स्वर्ग को लौट आये। एक दिन कामदेव को बुला कर इंद्र ने कहा—"कामदेव, ब्रह्मा के द्वारा तारक वर प्राप्त करके तीनों लोकों का अधिपति बन बैठा है। वह देवताओं को सता रहा है। उनके यज्ञ और तप में बाधा डाल रहा है। मैं तीनों लोकों पर शासन करता हूँ, तो तारक मुझ पर शासन कर रहा है। ईश्वर के द्वारा उत्पन्न व्यक्ति के ज़रिये ही उसकी मौत हो सकती है। ईश्वर तो कैलास में तपस्या कर रहे हैं। पार्वती शिव के निकट रहेगी, तब तुम शिवजी के मन में मोह पैदा करो।"

इन्द्र के मुंह से यह बात सुनकर कामदेव डर गया और बोला—"शिवजी के मन में पार्वती के प्रति मोह पैदा कर सकना क्या मेरे लिए संभव है? शिवजी बड़े तपस्वी हैं और क्रोधी भी। क्रोध में अगर यदि उन्होंने अपनी तीसरी आँख खोल दी तो तीनों लोक एक साथ भस्म हो जायेंगे।"

कामदेव की बातें सुन कर इन्द्र ने उसे हिम्मत बंधाते हुए कहा—"यह तुम क्या कहते हो? इन तीनों लोकों में ऐसा कौन आदमी है जो तुम्हारे वशीभूत न हो सके? तुम्हारे द्वारा नर-नारी मोहावेश हो जाने के कारण ही तो सृष्टि की परंपरा चालू है? तुम्हारे सुमन-बाणों के सामने बड़ी से बड़ी तपस्या भी ठहर नहीं सकती! अलावा इसके यह देवताओं का कार्य है!

अंतिम पृष्ठ का चित्र

जगत की रक्षा तुम्हारे द्वारा होनी है। तुम अपनी मदद के लिए मलय मारुत, वसंत तथा शुक-पिकों को भी अपने साथ ले जाओ और अपने बाणों के प्रहार से शिवजी को वश में कर लो।"

कामदेव इन्द्र की बातें सुन कर फूला न समाया। उसने मन में निश्चय कर लिया कि वह शिवजी को पराजित कर पार्वती के प्रति उनके मन में मोह पैदा करेगा। उसने पांचों बाणों को ले लिया। वसंत को साथ ले शुक पर सवार हो बेल वृक्ष वाले वन में जा पहुँचा, जहाँ पर शिवजी तपस्या कर रहे थे। इसके बाद वह एक गुप्त प्रदेश में छिप कर पार्वती के आगमन का इंतज़ार करने लगा।

कामदेव के पहुँचते ही बेल वृक्षों का वन वसंत की शोभा से भर गया। वृक्षों में कोंपलें उगीं, फूल भी खिल उठे। शुक, पिक आदि कूजने लगे। थोड़ी ही देर बाद पार्वती अपनी सखियों के साथ उस वन में आ गयी। वे सब अपने साथ फल, फूल व सुगंधित वस्तुएँ ले आयीं। वन में भारी परिवर्तन देख पार्वती को आश्चर्य हुआ, वह शिवजी के निकट जा पहुँची।

शिवजी ने पार्वती की ओर देखा। पार्वती में उन्हें कोई नवीनता दिखाई दी। सारा वन शोभायमान था। फिर भी शिवजी ने इस परिवर्तन के बारे में ज़रा भी न सोचा, आँख मूंद कर तपस्या में लीन हो गये।

पार्वती ने रोज़ की भांति शिवजी का उपचार किया। प्रणाम करने के बाद शिवजी का ध्यान करते उनके सामने खड़ी रह गयी। शिवजी ने फिर आँख खोल कर पार्वती की ओर देखा और मोहावेश में आकर वे उसकी ओर देखते ही रह गये।

उस वक़्त कामदेव ने शिवजी के हृदय पर निशाना बना कर अपने पुष्प बाणों का प्रहार किया। उसके अरविंद, अशोक, चूत और नवमल्लिकावाले फूल शिवजी को विचलित नहीं कर पाये। कामदेव के

पाँचवें बाण नीलोत्पल ने शिवजी के हृदय को घायल बना दिया। उसकी चोट से विचलित हो शिवजी क्रोध में आये और बोल उठे–"किसने मुझ पर पुष्प-बाण का प्रहार किया है?" इन शब्दों के साथ शिवजी ने अपना तीसरा नेत्र खोला।

शिवजी की तीसरी आँख के खुलते ही उसमें से आग की लपटें निकलीं। देखते देखते सारा वन भस्म हो गया। उसके साथ कामदेव भी जल कर राख हो गया।

उसी समय इन्द्र आदि देवताओं ने शिवजी के सामने पहुँच कर उनका स्तोत्र किया और उन्हें प्रसन्न बनाया। उस स्थिति में शिवजी ने अपना तीसरा नेत्र बंद करके आग की लपटों को वापस ले लिया। मौक़ा पाकर कामदेव की पत्नी रती देवी शिवजी के सामने आ पहुँची और निवेदन किया–"हे सदाशिव! इसमें मेरे पति देव का कोई दोष नहीं है। मेरे पति को इन्द्र आदि देवताओं ने इस विचार से प्रेरित किया कि आपके द्वारा पार्वती के गर्भ से पुत्र उत्पन्न हो जाय, तो वह तारक का वध कर सकता है। इसलिए वे आपके मन में पार्वती के प्रति मोह पैदा कर सके। इसलिए आप हमारे अपराधों को क्षमा कीजिये और मुझे अपने पति को प्रदान कीजिये। आप पार्वती के साथ विवाह करके तीनों लोकों की रक्षा कीजिये।"

इस पर शिवजी ने रती देवी से कहा– "कामदेव ब्रह्मा के शाप के कारण ही

भस्म हो गया है। उसने ब्रह्मा पर भी पुष्प बाणों का प्रयोग करके उनकी पुत्री के प्रति मोह पैदा किया और शाप का शिकार हो गया। मगर में तुम्हारे पातिव्रत्य में भंग न होने दूंगा। जगत की दृष्टि में कामदेव अशरीरवाला भले ही हो, पर वह तुम्हें देह सहित दिखाई देगा। मैं उसे प्राण दान करूँगा।"

इसके बाद शिवजी तपस्या बंद करके कैलास में चले गये। रुद्र गणों के साथ विराजमान हो अग्नि को बुला कर आदेश दिया—"हे अग्नि! तुम भविष्य में वृक्षों, पर्वतों और समुद्रों में प्रवेश मत करो।"

इन्द्र आदि देवता शिवजी की आज्ञा लेकर चले गये। शिवजी का मन पार्वती पर रम गया था। इसलिए उन्होंने पार्वती के साथ विवाह करने का निश्चय किया।

पार्वती ने शिवजी के द्वारा कामदेव तथा वन को भस्म होते देख लिया था, इसलिए डर कर वह अपनी सखियों के साथ घर लौट गयी थी। सारा समाचार सुन कर हिमवान और मेनका ने समझ लिया कि उनकी पुत्री ने पुनर्जन्म धारण किया है। उन दोनों ने पार्वती को समझा-बुझा कर उसका डर दूर किया। इसके बाद पार्वती शिवजी के विरह में परेशान रहने लगी। सदा उसे शिवजी का ध्यान सताता रहा। शिवजी के वास्ते अन्न-जल त्याग कर तड़पने वाली पार्वती को देख मेनका और हिमवान ने उसे समझाया—"बेटी, तुम चिंता न करो। तुम्हारा विवाह हम शिवजी के साथ ज़रूर करेंगे।"

एक दिन नारद मुनि आ पहुँचा। उसने पार्वती को ढाढ़स बंधाया और उसे शिव पंचाक्षरी मंत्र का उपदेश दिया। यह भी कहा कि शिवजी तुम्हारे साथ अवश्य विवाह करेंगे। तुम इस मंत्र का जाप करोगी तो तुम्हारी सभी इच्छाओं की पूर्ति होगी। उस दिन से पार्वती शिव पंचाक्षरी वाले महामंत्र का जाप करते शिवजी के ध्यान में निमग्न हो गयी।

११८. "बियर्ड मोर" बर्फीली नदी

संसार की दो-तीन प्रसिद्ध बर्फीली नदियों में "बियर्डमोर" भी एक है। यह दक्षिण ध्रुव वाल प्रांत में है। दक्षिणी ध्रुव पर जाने वाले षाकिल्टन और स्काट नामक व्यक्ति इसी बर्फीली नदी से होकर गये थे।

Photo by Prabhakar Mahadik
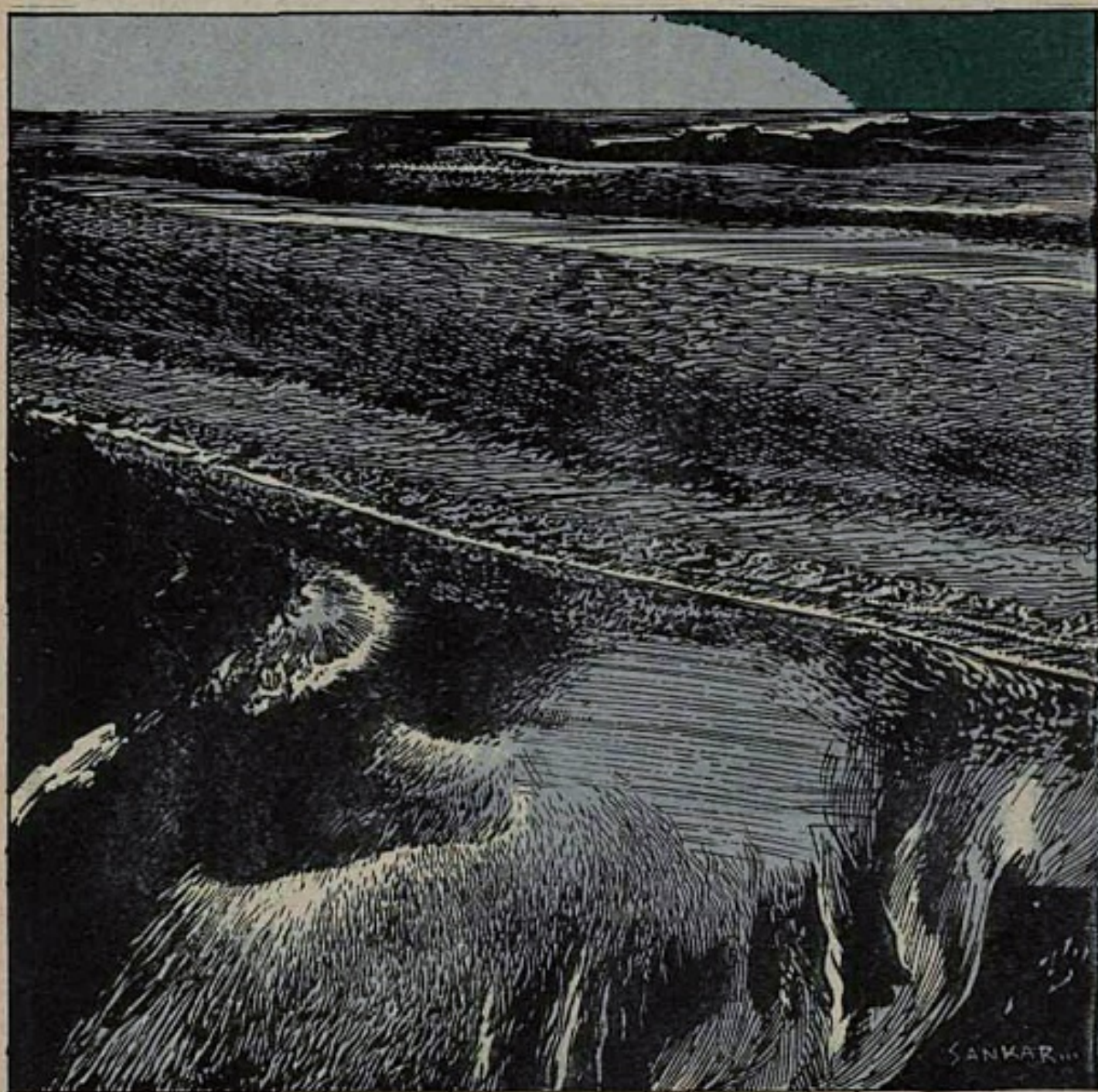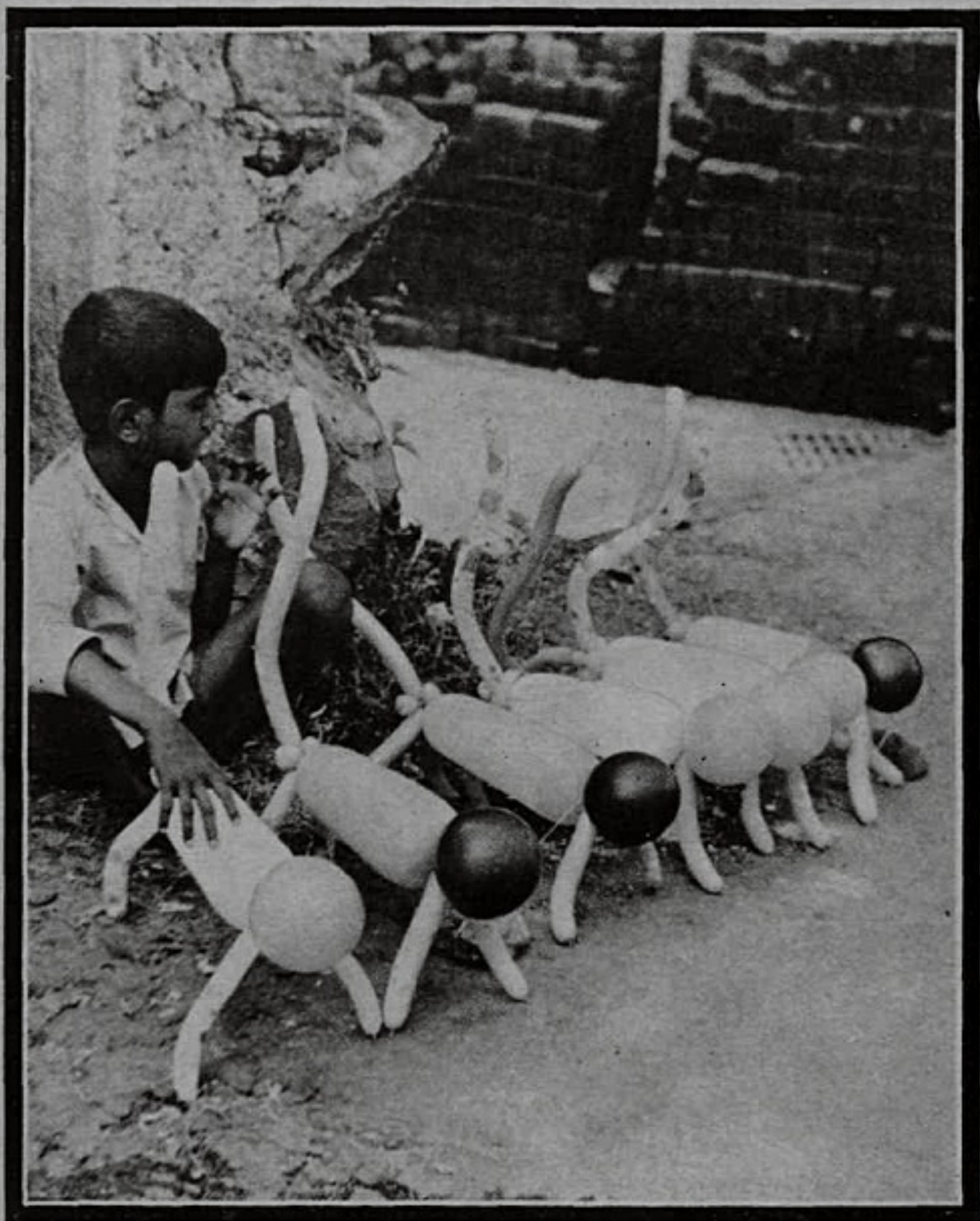
पुरस्कृत परिचयोक्ति

बन्दर झपटने को तैयार

प्रेषक : मुकेश जोशी,

Photo by Prabhakar Mahadik
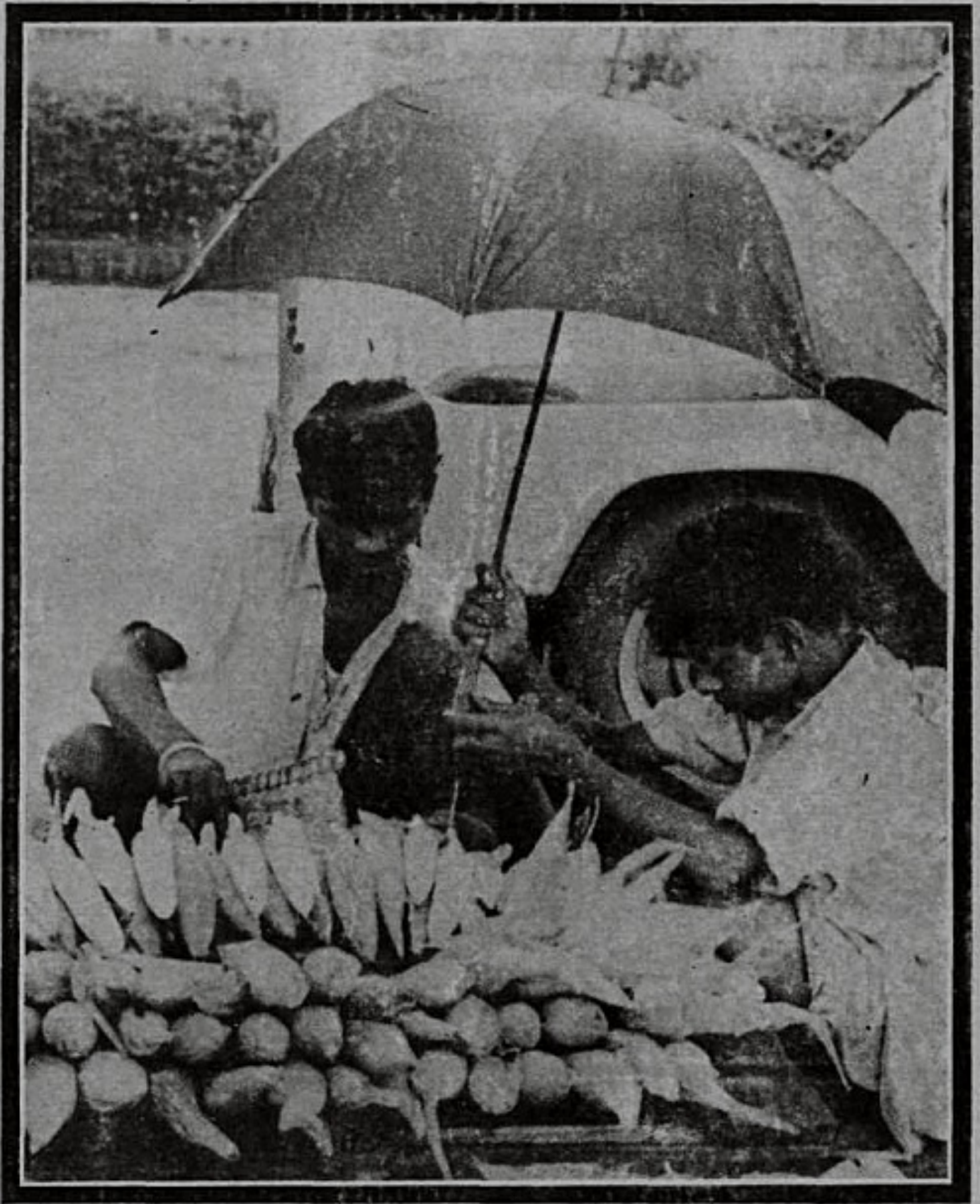
द्वारा श्री प्रभाकर जोशी
सुभाष बाजार, मेरठ

भुट्टेवाले हो जो होशियार

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता

नवम्बर १९७१ :: पारितोषिक २०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें।

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिये। परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिखकर निम्नलिखित पते पर तारीख़ ५ सितम्बर १९७१ के अन्दर भेजनी चाहिये।

फ़ोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन,
वड़पलनी, मद्रास-२६

दूसरा कवर पृष्ठ :
गान्धी मण्डप, कन्याकुमारी

तीसरा कवर पृष्ठ :
हिपोपोटमस (पानी का घोड़ा)

Printed by B. V. REDDI at The Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for Chandamama Publications, 2 & 3, Arcot Road, Madras-26. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'

महान
आकांक्षाएँ?
डीलक्स कैमल इंक इस्तेमाल कीजिए।
camel
deluxe ink